ISSN 2582-0133

साइकिल

बच्चों का दुमहिया

नया साल मुबारक हो...

वर्ष 5 अंक 5 दिसम्बर - जनवरी 2023



मूल्य ₹125

साइकिल

बच्चों का दुमाहिया

वर्ष 5 अंक 5 दिसम्बर - जनवरी 2023

सम्पादन सुशील शुक्ल, शशि सबलोक
सहायक सम्पादक निधि गौड़, चन्दन यादव
डिज़ाइन तापोशी घोषाल
कवर सुजाशा दासगुप्ता
वितरण राजेन्द्र परमार, अनीता शर्मा

साल	मूल्य	छूट %	मूल्य छूट के बाद	पंजीकृत डाक खर्च	कुल मूल्य
1	750	12	660	245	905 रुपए
2	1500	15	1275	490	1765 रुपए
3	2250	18	1845	735	2580 रुपए

एक प्रति 125 रुपए
(डाक खर्च अतिरिक्त)

भुगतान विवरण - बैंक ड्राफ्ट/चेक
इकतारा ट्रस्ट Ektara Trust के नाम नई दिल्ली में देय
ऑनलाइन ट्रांसफर - आई.सी.आई.सी.आई. बैंक,
बी-78 डिफेंस कॉलोनी, नई दिल्ली
खाता नम्बर - 630001028225, IFSC ICIC0006300 में भेजें।
ऑनलाइन खरीद की लिंक
www.ektaraindia.in/ektarashop/
भुगतान और वितरण की पूरी जानकारी
publication@ektaraindia.in पर दें।

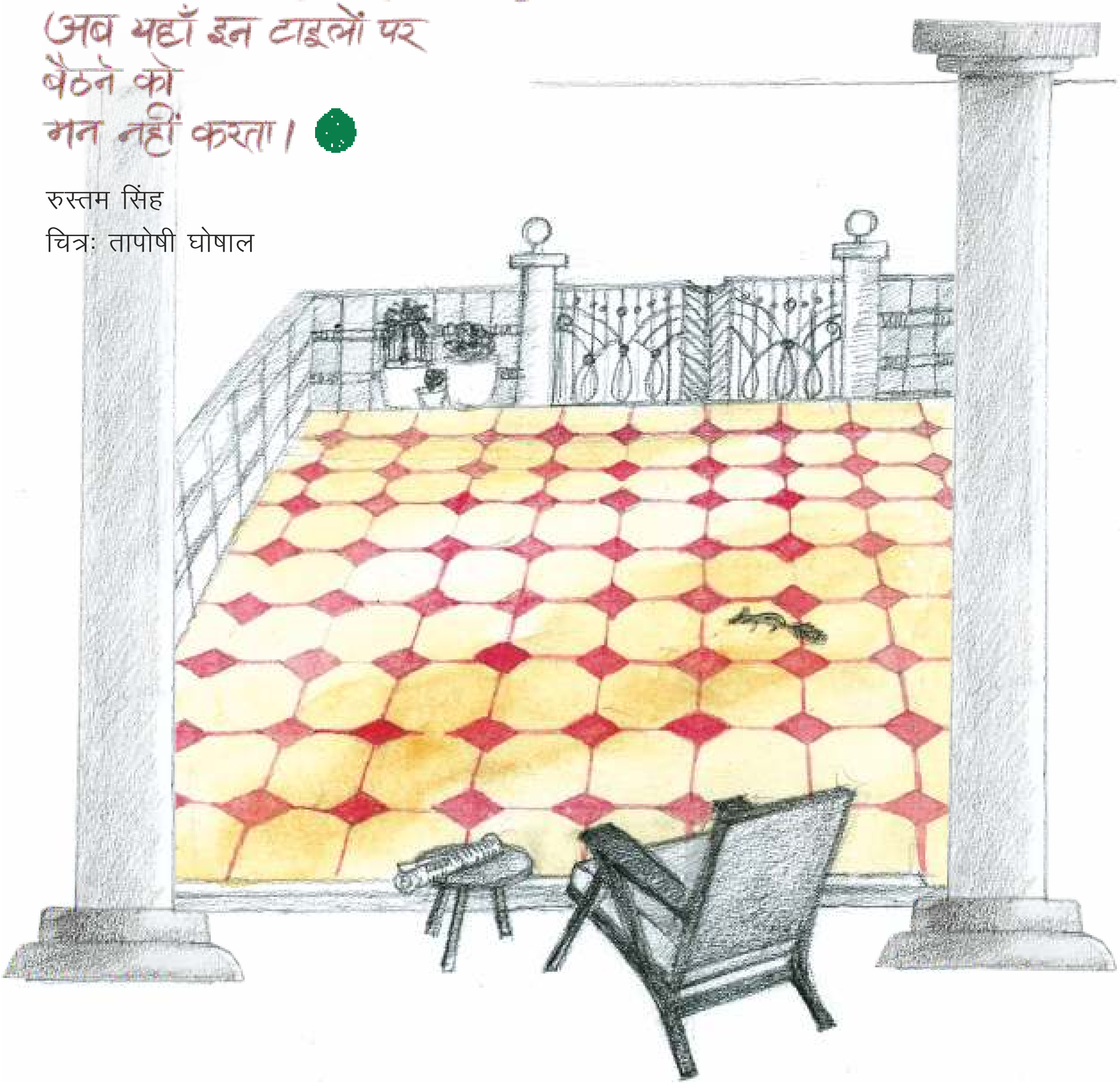
इस QR कोड को मोबाइल से स्कैन कर सभी UPI से भुगतान किया जा सकता है। भुगतान के बाद सम्पर्क, पता, ऑर्डर और भुगतान की तमाम जानकारियाँ साझा करें।

इकतारा **तक्षशिला का बाल साहित्य एवं कला केन्द्र**
2, मालवीय नगर, भोपाल 462003
फोन 0755-4939472, 9109915118, 9630097118
ई-मेल cycle@ektaraindia.in
वेबसाइट www.ektaraindia.in

नीबू का पेड़ था इस आँगन में।
घास थी।
उनकी मिली-जुली सुगन्ध नथुनों में चढ़ती थी
अब यहाँ इन टाइलों पर
बैठने को
मन नहीं करता।

रुस्तम सिंह

चित्र: तापोषी घोषाल



पुरखों का पेड़ हो जाना

जसिन्ता केरकेट्टा
चित्रः प्रिया कुरियन

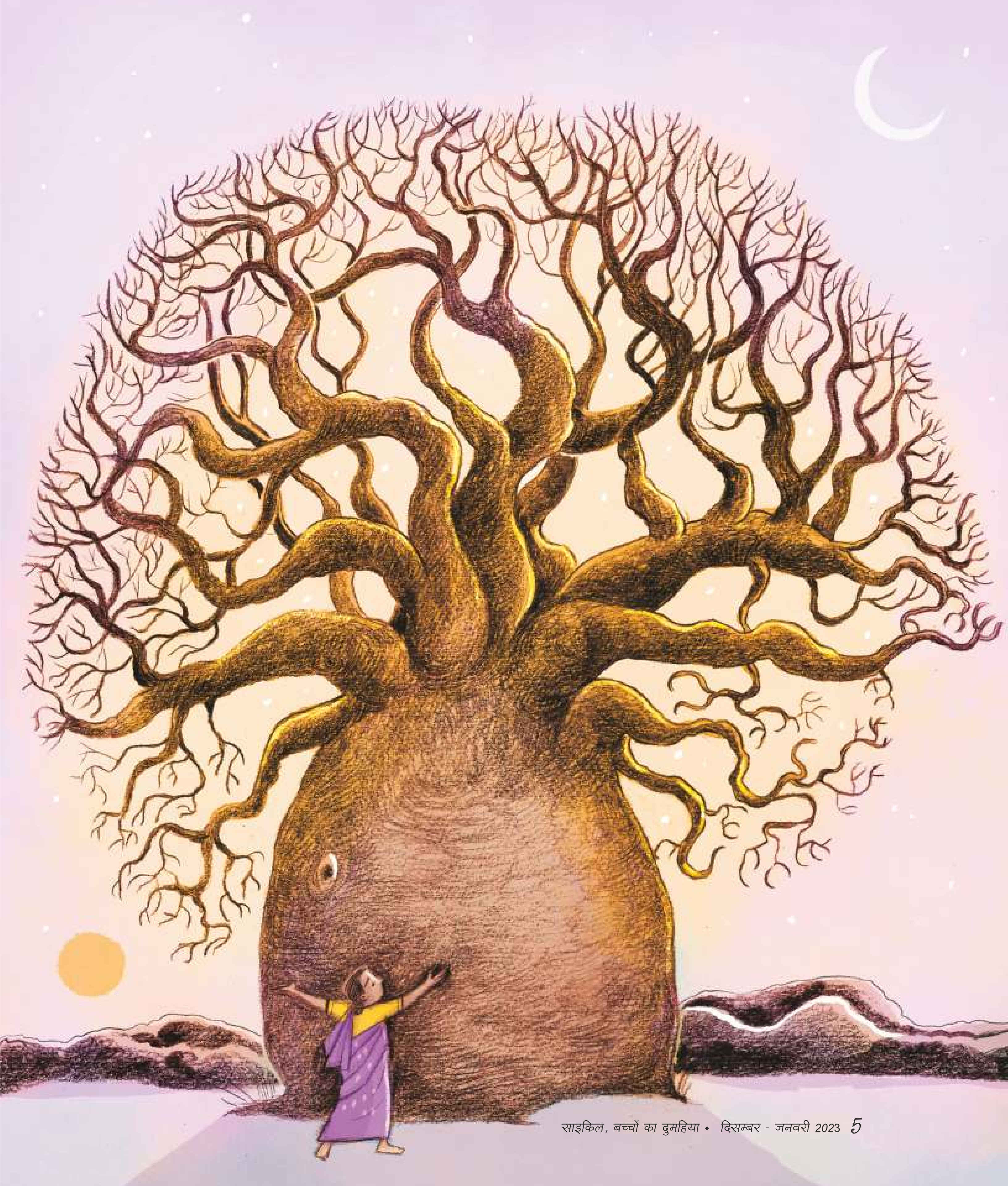
कुछ लोग इस धरती पर
ज़िन्दा लोगों के नाम पर
पेड़ काटते हैं

पर कुछ लोग इस धरती पर
मर गए लोगों की याद में
पौधे लगाते हैं

पौधे बड़े होकर पेड़ हो जाते हैं
उनके साथ पुरखे ज़िन्दा रहते हैं

एक दिन पुरखे, पेड़ हो जाते हैं





क्रोकोडाइल

निधि सक्सेना

चित्रः राजीव आइप



इतवार की दोपहर थी। सड़क खाली पड़ी थी। उस पर अम्मा का स्कूटर बहा जा रहा था। दोनों तरफ सप्तपर्णी के पेड़ खड़े थे। पेड़ों की कतार के पार बड़ा-सा तालाब था। वहाँ से गुज़रते ही फूले पेड़ की तेज़ गन्ध स्कूटर के साथ दौड़ पड़ी। हवा पहियों, हमारे कपड़ों में फँस हमें उड़ा ले जाने की फिराक में लगी। वहाँ जहाँ फूल थे। जहाँ से गन्ध झर रही थी। अम्मा की साँसें गहराती जा रही थीं। उनसे चिपकी मैं उनकी हर साँस के साथ हिल रही थी। मम्मी भी सप्तपर्णी-सी महकने लगी थीं। मैंने मम्मी को कस कर पकड़ लिया। मैं तो बच गई। पर मेरे हाथ और भी ठण्डे हो गए।

गन्ध, हवा, ठण्ड चौराहे तक साथ रहे। फिर लौट गए। चौराहा पार कर मम्मी ने स्कूटर बाईं तरफ मोड़ दिया। यह सरकारी घरों का इलाका था। मम्मी की दोस्त वन विभाग में काम करती थीं। छुट्टी की शामें दोनों अकसर साथ बिताती थीं। उखड़ी सड़क आती तो पता चल जाता था कि उनके घर पहुँचने ही वाले हैं।

मम्मी ने पीपल के नीचे स्कूटर खड़ा किया। वहाँ कई बच्चे शोर मचाते हुए खेल रहे थे। मैं उन्हें देखने लगी। माँ ने पूछा, "तुम्हें भी खेलना है?"

"नहीं, वो मुझे नहीं जानते।" कहकर मैंने मम्मी का हाथ पकड़ लिया। हम सीढ़ियाँ चढ़ने लगे।

ऊपर जाकर मम्मी अपनी दोस्त से बातों में लग गईं। उनकी दोस्ती हमारी दोस्तियों से अलग थी। वो बात करतीं तो दीवारों के कान भी कान लगा कर सुनते लेकिन कुछ सुन नहीं पाते। पर जब हम बात करते तो दीवारें अपने कान ढँक लेतीं। मैं बोर हो गई। और खिड़की से चिपककर नीचे खेलते बच्चों को देखने लगी।

यह खेल हमारे स्कूल या मोहल्ले में नहीं खेला जाता था।

एक बच्चा क्रोकोडाइल बना था। वो आँखें बन्द कर आँगन के बीच में खड़ा था। बाकी बच्चों को इस आँगन को पार कर दूसरी ओर जाना था। आँगन पार करते समय क्रोकोडाइल जिसे पकड़ लेता वह क्रोकोडाइल बन जाता।

बच्चे हँसते-डरते शोर मचाते बचते-बचाते आँगन के एक किनारे से दूसरे किनारे भाग रहे थे और क्रोकोडाइल उन्हें पकड़ने की कोशिश में हाथ-पाँव मार रहा था।

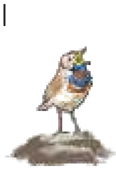
मुझे देखने में मज़ा आ रहा था। मम्मी की दोस्त भी मेरे साथ खिड़की से चिपक गईं और धीरे-से बोलीं, "खेलोगी?"

मैं उनकी तरफ देख मुस्करा दी।

थोड़ी देर में मैं भी उस आँगन में थी।

खेल फिर शुरू हुआ। सभी बच्चे बारी-बारी क्रोकोडाइल बनते गए। मैं ही बच्चा बनी रही। क्रोकोडाइल से डर भी लग रहा था। और उस पर दया भी आ रही थी। थोड़ी देर बाद, यूँ बच्चा बना रहना मुझसे सहन नहीं हुआ। एक बार क्रोकोडाइल बन देखने का इतना मन हुआ कि मैं भागते हुए खुद क्रोकोडाइल से टकरा गई। मेरा नाम ले शोर मच गया क्रोकोडाइल-क्रोकोडाइल। सब बच्चे मुझसे दूर हट किनारे हो गए। मैं मुस्करा रही थी। मेरी आँखों पर पट्टी बाँधी गई। बच्चे चीखते हुए मुझसे दूर-दूर भाग रहे थे। मैं हाथ फैला कर झूठ-मूठ बच्चों को छूने की कोशिश कर रही थी। जैसे ही किसी के पास आने की आहट होती मैं अपना हाथ उससे दूर ले जाती। मैं देर तक क्रोकोडाइल बने रहना चाहती थी।

मेरी आँखें बन्द थीं। सुन्दर अँधेरा दिख रहा था।



मेरे हाथ हवा में लहरा रहे थे। मैं क्रोकोडाइल बन हवा में तैर रही थी। तभी माँ की आवाज़ आई। और स्कूटर स्टार्ट होने की भी। मैं क्रोकोडाइल की-सी तेज़ी से पलटी। आँख की पट्टी हटाई और दौड़ पड़ी। बच्चों की बाय-बाय देर तक सुनाई देती रही। जैसे ही उखड़ी सड़क पर स्कूटर उछला मुझे अहसास हुआ कि अब उस मोहल्ले में कोई क्रोकोडाइल नहीं बचा था। और मैं क्रोकोडाइल बनी रह गई थी। वापिस बच्चा होने का मौका ही नहीं मिला।

अब?

हलकी-सी सिरहन मेरे भीतर दौड़ गई। अब मैं क्रोकोडाइल थी!

स्कूटर के साथ मैं भी उछल रही थी। मैं मम्मी की कमर कस कर पकड़ने ही वाली थी कि झटके से दूर हट गई। उन्हें नाखून न चुभ जाएँ। मेरी खुरदुरी खाल से वो छिल न जाएँ।

मेरा मन किया मम्मी को बता दूँ कि वो अनजाने में किसे सीट पर बिठाए घर ले जा रही हैं।

पर बता दिया तो वो डर जाएँगी।

तो??

तब तक हम ठण्डी सड़क पर पहुँच गए थे। इस बार ठण्ड कुछ ज़्यादा लगी। पर मैं मम्मी से दूर-दूर ही रही।

घर पहुँचकर मैं सीधे अपने कमरे में चली गई। और चुपचाप बिस्तर पर पड़ गई। अचानक ख्याल आया कि क्रोकोडाइल पीठ के बल नहीं लेटते। मैं पलट गई। मुझे अच्छा लगा। देर रात दादी बत्ती बन्द करने आईं तो मैंने पूछा, "क्रोकोडाइल को हिन्दी में क्या कहते हैं?"

"मगरमच्छ। तुम्हें कहानी सुनाई थी न बन्दर और मगरमच्छ वाली।"

"दादी, तुम मगरमच्छों के बारे में और भी जानती हो?"

"हाँ! मगरमच्छ को वापिस इंसान बनकर जन्म लेने में सैकड़ों साल लग जाते हैं।"

मैंने दबी, काँपती ज़ुबान में पूछा, "दादी, तुम्हें मगरमच्छ कैसे लगते हैं?"

"बड़े डरावने।"

मैं कुछ नहीं बोली। चादर खींचकर खुद को ढँक लिया। डर था दादी हर बार की तरह जाने से पहले मुझ पर हाथ न फेर लें।

वापस इंसान बनने में कितने सारे साल और लगेंगे! अब यह मज़ाक की बात नहीं रही थी। मुझे तो सौ की गिनती तक ठीक से नहीं आती थी। यूँ मगरमच्छ बने रह जाना...

अगली सुबह ब्रश करते हुए मैंने गौर से शीशे में देखा। मुझे मेरे दाँत कुछ बड़े-बड़े से लगे। मैं बार-बार मुँह बन्द-खोल करने लगी। कहीं बाहर निकले तो नहीं हैं! मैंने बेमन से यूनिफॉर्म पहनी। भारी होते बस्ते से आधी किताबें निकाल दीं। आने वाले सैकड़ों सालों के लिए मुझे क्या सीखना चाहिए इसका मुझे कुछ भी अन्दाज़ा नहीं हो रहा था।

घर के दरवाज़े से गली के बाहर खड़े गुलमोहर तक का रास्ता मैंने धीमे कदमों से तय किया। स्कूल बस आई और चली गई। मैं वैसे ही खड़ी रही। मम्मी दादी तक तो ठीक था पर अपने दोस्तों को कैसे धोखा दे सकती थी। मैं पैदल चल दी। लोगों से बचकर चलने की कोशिश में रही। मेरा एक सीक्रेट था। जो मेरे भीतर था। मेरे दिलो-दिमाग पर वही छाया रहने लगा था। सीक्रेट बाहर न दिखे तो लोगों को खास फर्क नहीं पड़ता। वो मुझसे टकरा-टकरा कर चल रहे थे। चलना मुश्किल था फिर भी किसी तरह

चिड़ियाघर पहुँच गई। और सीधे मगरमच्छ झील पर गई। धूप में अलसाए पड़े मगरमच्छों को देर तक देखती रही। मन ही मन सोचा ये इतने भी बुरे नहीं हैं। दादी यूँ ही डरती हैं!

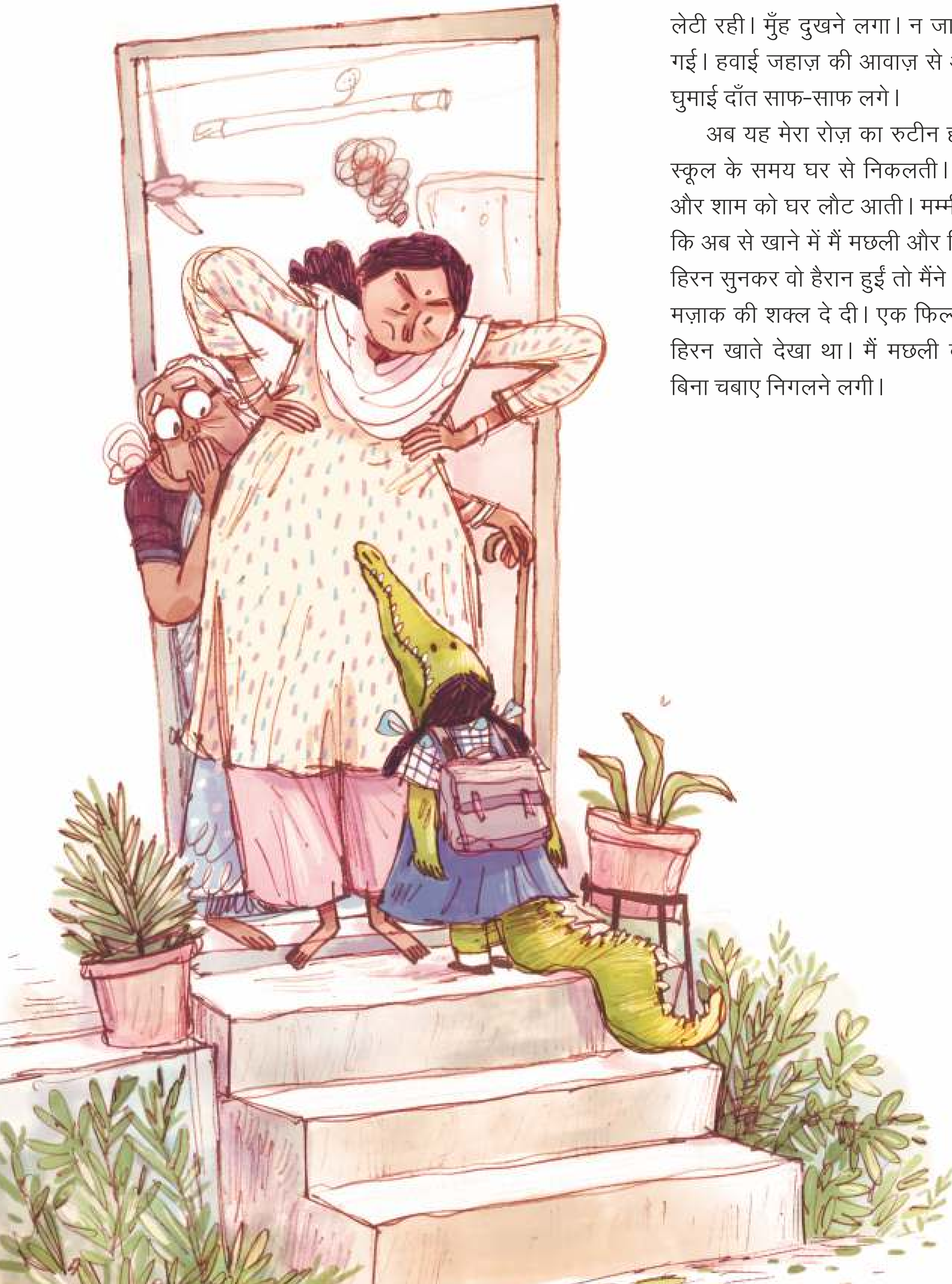
घण्टों बाद एक मगर हिला और अपना भारी शरीर पानी में घसीट ले गया। दूसरा वैसे ही पड़ा रहा। गिरे हुए खजूर के पेड़ जैसा।

तभी एक छोटी चिड़िया आई और मगरमच्छ की नाक के आसपास मण्डराने लगी। मगरमच्छ ने अपना मुँह खोल दिया। चिड़िया सीधे मुँह में घुसकर उसके दाँतों में चोंच मारने लगी। मैं डरती रही कहीं मगर मुँह न बन्द कर दे। चिड़िया का तो कचूमर निकल जाएगा। मैं फेंस पर लटककर देखने लगी।

"यह इजिप्शियन प्लोवर है। मगर की दोस्त। यह मगरमच्छ के दाँतों में फँसा मांस खाती है। इससे इसका पेट भरता है और मगर के दाँतों की सफाई हो जाती है।" मुझे करीब से एक आवाज़ सुनाई दी।

अचानक याद आया। एक बार डेंटिस्ट के आगे मुझे भी देर तक मुँह फाड़े बैठा रहना पड़ा था। अगली सुबह मैं जल्दी उठी और छत पर चली गई। बहुत पहले मैं हवाई जहाज़ की आवाज़ सुन छत पर भाग जाया करती थी। लेकिन आज देर तक मुँह खोले





लेटी रही। मुँह दुखने लगा। न जाने कब झपकी आ गई। हवाई जहाज़ की आवाज़ से आँख खुली। जीभ घुमाई दाँत साफ-साफ लगे।

अब यह मेरा रोज़ का रुटीन हो गया था। सुबह स्कूल के समय घर से निकलती। चिड़ियाघर जाती और शाम को घर लौट आती। मम्मी से कह दिया था कि अब से खाने में मैं मछली और हिरन ही खाऊँगी। हिरन सुनकर वो हैरान हुईं तो मैंने हँसते हुए बात को मज़ाक की शक्ल दे दी। एक फिल्म में मैंने मगर को हिरन खाते देखा था। मैं मछली के बड़े-बड़े टुकड़े बिना चबाए निगलने लगी।

अगले दिन जब मैं रेलिंग से लटकी थी तो किसी ने मुझे टोका, "अरे, तुम फिर!"

ये भी यहाँ रोज़ आते हैं? मैंने मन ही मन सोचा। कहीं ये भी मगरमच्छ तो नहीं? मैं मुस्करा दी।

वो मुस्कराए नहीं। मुझे देखते रहे। इनका भी कोई सीक्रेट होगा। अब मुझे लगने लगा था कि हमारे सीक्रेट ही सच होते हैं। बाकी सब कहानियाँ। दादी की कहानी कितनी झूठी थी। मगरमच्छ बन्दर का कलेजा खाने के लिए क्यों चालबाज़ी करेगा। ये इंसान किसी के बारे में कुछ पता-वता करता नहीं है, झूठी कहानियाँ बना लेता है बस। अच्छा है जो इंसान नहीं रही मैं!

मैंने अब शाम के बाद काला चश्मा पहनना शुरू कर दिया है। रात में लाल जलते बिन्दुओं में बदलती अपनी आँखें नहीं दिखाना चाहती थी मैं।

जब से पता चला है कि मगरमच्छ खाने को पचाने के लिए पत्थर खाते हैं मैंने कुछ छोटे पत्थर खाने की कोशिश की। नालियों के पास के पत्थर भुरभुरे होते होंगे। मेरा बस्ता भुरभुरे छोटे पत्थरों से भरा रहने लगा था। पर उन्हें खा अभी भी नहीं पाई।

मन किया अपना सीक्रेट किसी से शेयर करूँ। एक मगरमच्छ इस दुनिया में कितना अकेला हो सकता है अचानक इसका अहसास हुआ।

मोहल्ले के दोस्तों को बता दूँ? पर कहीं कोई मम्मी या दादी को न बता दे। मोहल्ले में बात फैल गई तो क्या होगा? एक बार गलती से आ गए साँप तक को नहीं छोड़ा था। फिर मैं तो!!!

ऐसा कई दिन चला। मैं रोज़ चिड़ियाघर में अपने लोगों के साथ टिफिन खाने लगी थी। पढ़ाई का तो अब मुझे कोई फायदा दिख भी नहीं रहा था। तैरना और शिकार करना जल्द सीखना होगा।

एक रोज़ मैं घर लौटी तो देखा मम्मी इधर-उधर तेज़ी से चक्कर काट रही थीं! गुस्से में है क्या? मैंने अपनी मासूम मगरमच्छी नज़रों से उन्हें देखा।

मुझे देखते ही वो भड़क उठीं, "कहाँ जाती हो?"

"चिड़ियाघर।"

फिर धीरे-धीरे उन्हें सम्भालते हुए मैंने अपने मगरमच्छ में तब्दील होने की पूरी कथा सुना दी। शाम हो गई थी। मेरा मन बिना हिले-डुले बिस्तर पर पड़े रहने का था। पर मम्मी!

उन्होंने मुझे स्कूटर पर लगभग पटका और स्कूटर स्टार्ट कर दिया।

वही रास्ता था। सप्तपर्णी अभी भी फूली थी। पर उसकी गंध जैसे फूलों पर ही अटकी रही। मम्मी स्कूटर की स्पीड को बढ़ाती जा रही थीं। हवा आज और ज़्यादा ठण्डी थी। मेरे हाथ मम्मी की कमर से दूर ही रहे। आँखों में आँसू आ गए। मन किया मम्मी को बोल दूँ। पर मगरमच्छ के आँसू को कोई सीरियसली नहीं लेता। मैं स्कूटर की सीट को कस कर चुपचाप बैठी रही।

अपनी दोस्त के घर के पास पहुँची तो बोलीं, "जाओ वापिस बच्चा बन कर आ जाओ!"

मैं एक उदास-सी खुशी के साथ आगे बढ़ी। किसी और को क्रोकोडाइल बनाकर मैं बच्चा बनने वाली थी।

आँगन में क्रोकोडाइल-क्रोकोडाइल का खेल चल रहा था। और बीच में एक दूसरा क्रोकोडाइल पहले ही से मौजूद था।



पप्पी सर

कहानी तथा चित्रः शिराज़ हुसैन

कितनी खूबसूरत होती है गिटार की आवाज़! मगर गिटार बजाना मुश्किल होता है। मेरी बड़ी बहन ने मेरे जन्मदिन पर एक गिटार तोहफे में दिया। वह इतना सुन्दर था कि कभी उसे बैग में ही नहीं रखता और थोड़ी-थोड़ी देर में गोद में ले लेता। इसके साथ एक पतली-सी 'आओ गिटार सीखें' किताब थी। जिसमें हारमोनियम से गिटार ट्यून करना, गिटार कोड्स और कुछ हिन्दी गाने भी लिखे हुए थे। गिटार नॉट्स और नोट्स से बने गिटार कोड्स पकड़ना, उँगलियों में खुद ही गाँठ लगा-लगा कर खोलने जितना मुश्किल लगता। गिटार के सेट बोर्ड पर खिंचे तारों को सबसे छोटी उँगली तो ठीक से दबा नहीं पाती, तब भी मैं कोशिश में लगा रहता।

एक शाम टीवी पर पाँच-छह तबलों में घिरे ज़ाकिर हुसैन और एक बूढ़े आदमी को तबला बजाते हुए देखा। दोनों तबला बजाते हुए ऐसे मुँह बना रहे थे जैसे, आपस में बात कर रहे हों। ज़ाकिर हुसैन के बड़े घुँघराले बाल देखकर मुझे अपने स्कूल के म्यूज़िक टीचर पप्पी सर याद आ गए। "देखो बेटे, यह ज़ाकिर हुसैन के उस्ताद हैं और बाप भी हैं उस्ताद अल्लाहरखा।" पास बैठे मेरे पापा बोले।

मैंने टीवी पर निगाह और जमाई कि तभी ज़ाकिर हुसैन ने गर्दन आगे को झटकी जैसे, पापा की हाँ में हाँ मिलाई हो। टीवी में आगे अलग-अलग कलाकार, अलग-अलग तरह से एक जैसा राग गाते बजाते और नाचते हुए देखे मगर कोई गिटार वाला नहीं दिखा। मैंने यूँही सोचा कि अगर मैं बेहतरीन गिटार बजाने लगा तो आगे चल कर इसी लाइन में शामिल हो सकता हूँ। अगले दस दिन में ही मैंने दिल वाले दुल्हनियाँ ले जाएँगे और कर्ज़ जैसी फिल्मों की धुनें अटक-अटक कर बजानी सीख ली थीं। मुझे अब उस्ताद की ज़रूरत थी और यह ज़रूरत हमारे म्यूज़िक टीचर पप्पी सर पूरी कर सकते थे। अपने बड़े घुँघराले बालों के साथ वह इकलौते टीचर थे जो स्कूल में जींस पहन कर आते थे। अकसर रंग-बिरंगी कमीज़ों में वह अपनी ही धुन में चलते दिखते। स्कूल आए उन्हें दो साल ही हुए थे। किसी बोर्डिंग स्कूल के लड़के ने उनका नाम पप्पी सर रख दिया था। गिटार आने के बाद से मैं उन्हें ढूँढ-ढूँढ कर सलाम करने लगा था। एक दिन जब उन्होंने पूछा कि क्या हाल हैं?

मैंने बोल दिया सर, "मैंने नया गिटार ले लिया



है, प्लीज़ थोड़ा सिखा दीजिए।"

वह वेरी गुड बोले और चल पड़े।

मैंने भी कदम से कदम मिलाते कहा, "सर, प्लीज़ थोड़ा सिखा दीजिए। मेरा घर स्कूल से दूर भी नहीं है।"

सर मुस्कराए। "अच्छा थोड़ा सिखाऊँ, पूरा नहीं।" "दो-तीन क्लास दे दीजिए।"

"बेटा, मैं सिखा तो दूँ मगर मेरे पास टाइम ही कहाँ होता है। अभी भी क्लास है, तब तक तुम खुद प्रैक्टिस करते रहो, फिर कभी बताएँगे।"

स्कूल की सबसे ऊँची और आखिरी यानी चौथी मंज़िल पर म्यूज़िक रूम था। स्कूल में शायद ही किसी ने पप्पी सर का गाना बजाना सुना था। मगर जड़ें कौन देखता है, सब फूल की ही तारीफ करते हैं। सर के म्यूज़िक रूम के आखिरी कोने पर ही सेवन-सी थी जो बरसों से खाली पड़ी थी। कहते थे कि सालों पहले वहाँ एक बच्चा मर गया था और कभी-कभी वहाँ उसके हँसने की आवाज़ गूँजती है। यह और बात है किसी ने आज तक उसे देखा नहीं था। उधर पप्पी सर के म्यूज़िक रूम में भी तबले, हारमोनियम, फटा हुआ कॉन्गो, खराब माइक और बड़ी-बड़ी दरियाँ और दो स्पीकर मौजूद थे। मगर कभी भी किसी ने एक ज़माने से दरियों के अलावा कुछ और इस्तेमाल होते नहीं देखा था। जलसों के वक्त भी वहाँ से "जन मन गण', 'सारे जहाँ से अच्छा' और स्कूल के तरानों के अलावा चौथी आवाज़ तक नहीं सुनाई देती। मगर तब भी पूरा स्कूल मेरे समेत पप्पी सर को ही संगीत सम्राट मानता था।

एक संडे जब मैं गिटार बजाने के बाद जंगले पर खड़ा आसपास की दुनिया निहार रहा था तो दूर से ही बाल उछालते पप्पी सर दिखाए दिए।

अरे वाह! सर तो इधर ही आ रहे हैं। मैंने जल्दी से नीचे उतर कर दरवाज़े के पास घात लगा ली और जैसे ही रंगों की झलक पड़ी, मैं सर के सामने कूद गया। वह चौंक कर हँसने लगे। "अरे तुम यहाँ रहते हो?"

"जी सर आइए ना। मेरा गिटार देख लीजिए न, प्लीज़।"

"बच्चे अभी तो मैं बाल कटवाने जा रहा हूँ। वापसी में देखता हूँ।"

"सर, प्लीज़ सर, एक बार देख लीजिए। सर का गिटार को निगाह भर देखना भी आशीर्वाद से कम नहीं लग रहा था।"

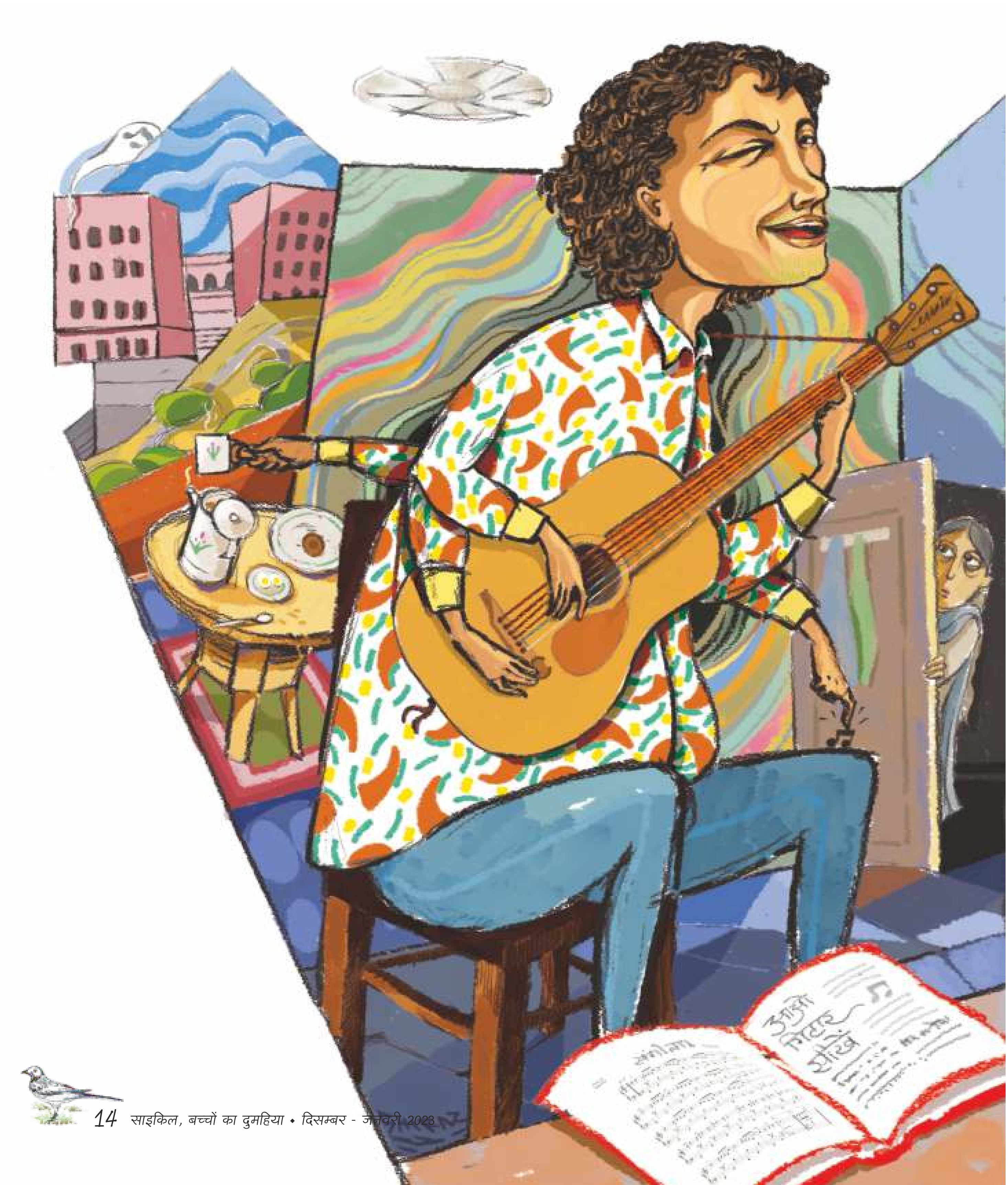
"नहीं बच्चे। साज़ को ऐसे खुले में लाकर नहीं दिखाते।"

सर ने खड़े-खड़े कितनी गहरी बात कह दी थी। एक लम्हे बाद, मैं धीमी आवाज़ में बोला, "सर लौटने पर देख लीजिए प्लीज़।"

"अच्छा-अच्छा अभी मैं चलता हूँ वरना नम्बर नहीं आएगा नाई के यहाँ।"

तब मैं कहना चाहता था कि सर बाल मत कटवाइए। ऐसे ही उम्दा लगते हैं। मगर तब तक सर चल दिए थे। पप्पी सर को मैं वापसी में मिस नहीं करना चाहता था इसलिए वापस छत के जंगले पर से दूसरी दिशा में ही लटका रहा। वह पाँच मिनट बाद ही वापस आते दिखे। इस बार वह गिटार देखने को राज़ी होकर ऊपर आ गए। मैंने उन्हें पंखा चलाकर कमरे में बिठाया। मेरे लिए यह यकीन करना मुश्किल हो रहा था कि साक्षात् संगीत सम्राट मेरे यहाँ पधार चुके हैं। अम्मी को फौरन बताया तो वह खुशी-खुशी चाय नाश्ता बनाने किचन में चली गईं। ठण्डा पानी पीकर सर ने गिटार हाथ में लिया। बजाने से पहले




आओ
गिटार
सीखें

ही उन पर गिटार कितना जँच रहा था। उन्होंने गिटार गोद से ऊपर उठाकर उसका चौड़ा हिस्सा अपने मुँह के सामने किया और गिटार के हत्थे को आगे कर दिया। वह उसे किसी बन्दूक की तरह पकड़ कर देख रहे थे। लगता था जैसे, सर किसी सुर असुर का निशाना लगा रहे हों। फिर गिटार नीचे करके बारीक तार को छुआ। एक मधुर-सी टिन टिन हुई। "शुरुआत के लिए तो अच्छा है तुम्हारा गिटार।"

मेरी जान में जान आई। "बिट्टू बेटे," अम्मी ने आवाज़ लगाई।

किचन गया तो अम्मी ने सलीके से चाय-बिस्कुट और मेरा पसन्दीदा काजू वाला नमकीन बड़ी ट्रे में सजा दिया था। मैंने नमकीन के अन्दर से एक काजू उठाकर पप्पी सर की ट्रे में सबसे ऊपर रख दिया जैसे केक पर चेरी रखते हैं।

ट्रे पकड़े-पकड़े घुटने से दरवाज़ा खोल कर मैं अन्दर घुसा। "अरे, यह सब क्या ले आए भाई!"

"कुछ नहीं सर, बस।"

चाय-नाश्ते से जल्दी-जल्दी निपट कर सर ने एक सुरीली डकार ली और बोले, "अच्छा भई अब चलते हैं। अपनी अम्मी को सलाम कहना।" "सर, अब प्लीज़ बता दीजिए गिटार पर कुछ।"

वह उठते-उठते दुबारा कुर्सी में धँस गए और बोले, "बताना किया है। सबसे अहम होता है रियाज़। अगर रियाज़ करोगे तो कहीं से कहीं निकल जाओगे।"

मैंने एक पल मैं खुद को गिटार बजाते-बजाते दूर पहाड़ियों में निकलते देखा मगर फिर वापस कमरे में आ गया।

गिटार गोद में फिट करके सर बोले, "यह छह तार नहीं छह आवाज़ें हैं।" ओह हो हो! क्या कह दिया था सर ने बैठे-बैठे। मैं इस से पहले कि पास रखी डायरी में यह बात लिखता। सर ने मुस्कराते हुए मना कर दिया।

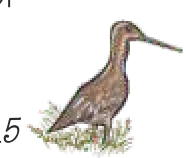
वह अपने ही बड़प्पन से थोड़ा शरमा गए थे।

गिटार के सबसे ऊपर वाले मोटे तार पर धीरे-से 'तुझे देखा तो यह जाना सनम...' धुन सर ने बजाई। जो मुझे आती थी। मगर दिलचस्पी से सर को देख रहा था कि वह इस आसान-सी धुन से कोई बड़ा-सा सबक दे देंगे।

"यह तार मोटी आवाज़ वालों के लिए होता है।" उन्होंने फिर छठे तार पर धुन बजाई और साथ ही रुक-रुक कर गाई भी। "इस के नीचे वाले तार पर हल्की मोटी आवाज़ वाले गाते हैं। 'तुझे देखा तो ये...' और इससे नीचे तार पर इससे भी नीची आवाज़ के लोग गाते हैं।" सर यह कैसा ज्ञान दे रहे थे। जिसका ज़िक्र न 'आओ गिटार सीखें' में था न ही किसी इंटरनेट वीडियो में। मगर तब भी पूरी कोशिश कर रहा था कि लगातार नीचे जाते सबक की उठान समझ सकूँ।

फिर सर बोले, "आखिर के यह दो तार जो सबसे पतले हैं यह लड़कियों के गाने के लिए होते हैं।" कह कर सर ने अपनी आवाज़ पतली करके फिर 'तुझे देखा तो...' गाया और बिल्कुल आखिरी तार पर उन्होंने आँखें बन्द कर लीं और लम्बी साँस लेकर बहुत ही बारीक आवाज़ में गाया। 'तुझे देखा तो यह जाना सनम' का 'म' उन्होंने पतला और तेज़ करना शुरू कर दिया। चाय के कप और केतली में सीटी बोलने लगी। सर की आवाज़ कमरे में हर तरफ गूँजी। उन्होंने आँख और भींच लीं। 'बजे बजे सरगम बजे हर तरफ से सरगम बजे'।

मेरी हँसी निकल ही जाती कि तभी अम्मी की



परेशान-सी आवाज़ आई, "अरे कौन है बिट्टू?"

सर ने भी यह सुना और खुद अपनी ही आवाज़ के सम्मोहन से बाहर आकर उन्होंने आँखें खोलीं।

मैंने उठकर दरवाज़े से बाहर झाँक कर कहा, "कोई नहीं, सर हैं सर।"

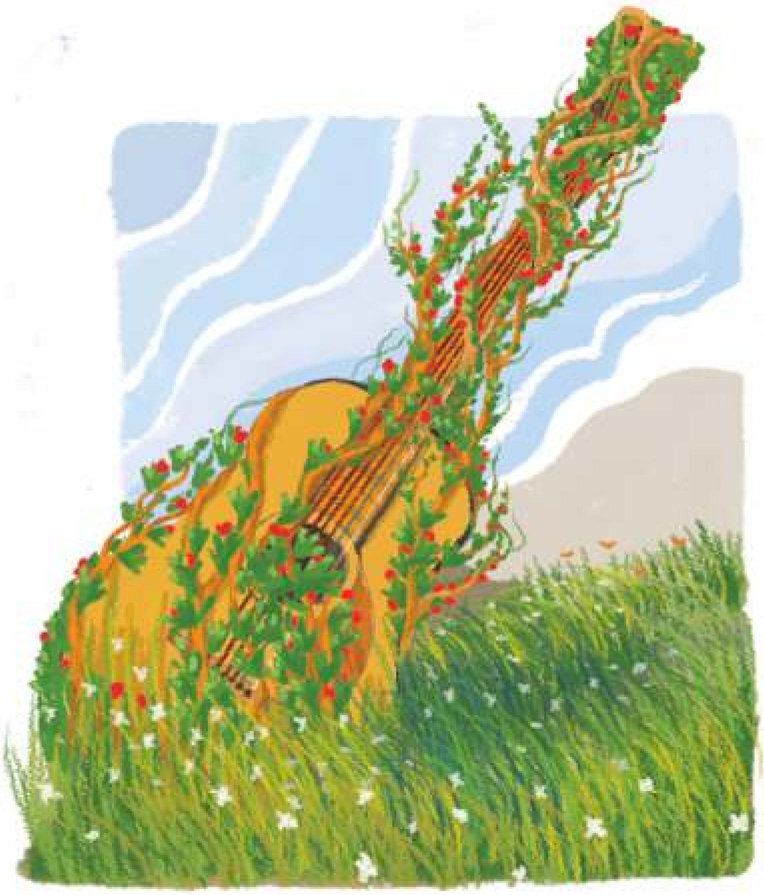
मुझे लगा कि मेरे जवाब देने के तरीके से उन्हें कुछ अन्दाज़ा हो गया था कि मैं भी उनके सम्मोहन से बाहर आ चुका हूँ।

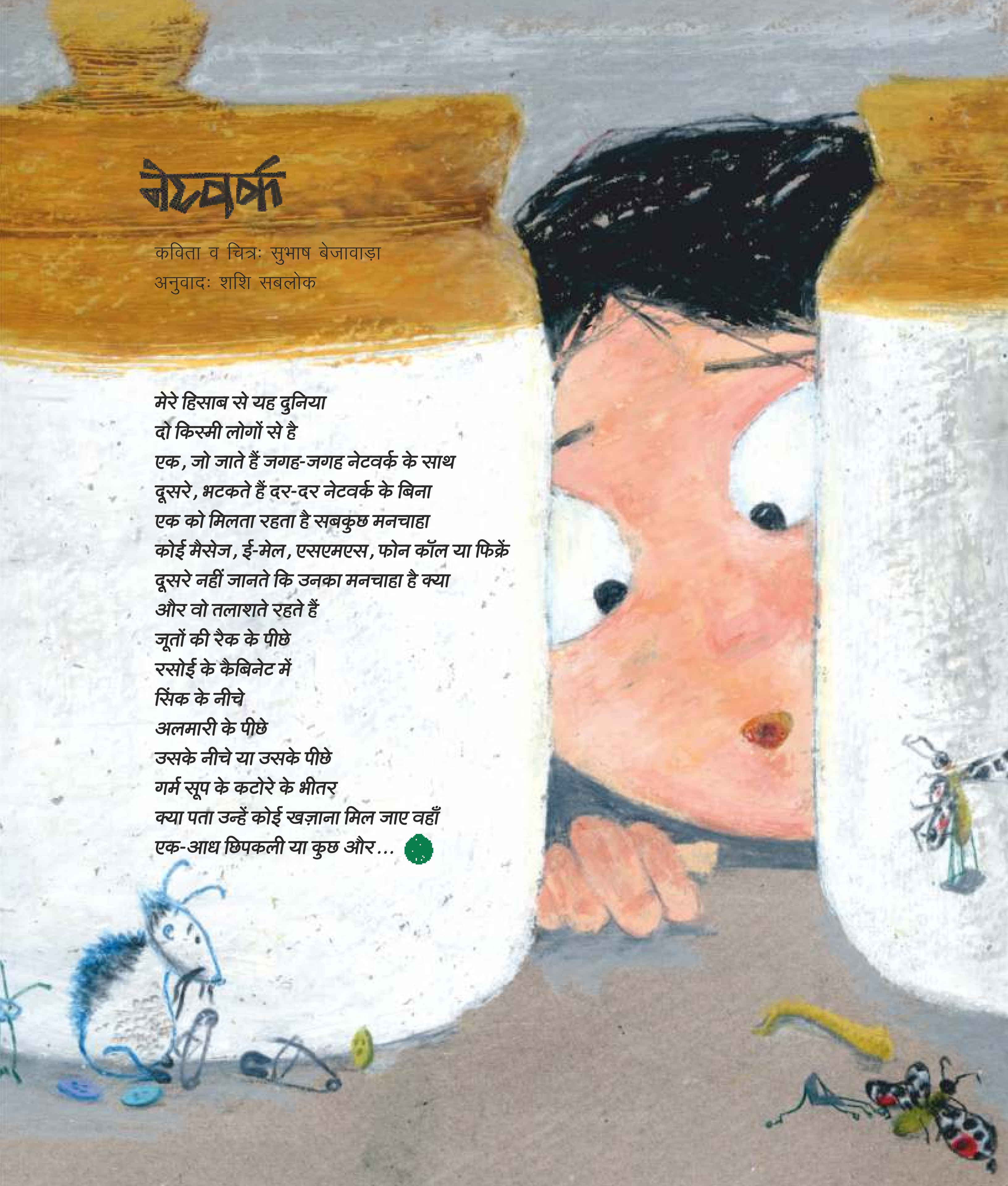
पप्पी सर मुस्कराने की कोशिश में कुर्सी से उठ चुके थे। "चलो, अच्छा तुम रियाज़ करो। नाई को एक बार फिर देख लूँ। मेरा नम्बर आ गया होगा। अम्मी को सलाम कहना।" मैं कुछ नहीं बोला। उनको छोड़ने नीचे तक गया। वह जाने लगे तो हिम्मत करके बोला, "सर, आप पर यही बाल अच्छे लगते हैं।"

वे मुस्करा दिए। इस पल वह किसी पप्पी जैसे ही मासूम लगे। उस दिन मैं उनको दूर तक जाते देखता रहा।

कभी-कभी लगता है कि हमारे स्कूलों और कॉलिजों में अलग-अलग भेस और रंग रूप में आज भी पप्पी सर मौजूद हैं, जिनके म्यूज़िक रूम चौथी मंज़िल की सेवन-सी से बहुत अलग नहीं हैं। किसी ने कभी वहाँ कुछ होते हुए नहीं देखा मगर तब भी 'जन गण मन' या 'सारे जहाँ से अच्छा' की आवाज़ें सुनाई देती हैं।

इस भागती दौड़ती शहरी ज़िन्दगी के साथ-साथ मेरे म्यूज़िक सीखने के सबक आज भी जारी हैं मगर इतने बड़े अरसे बाद भी यह किस्सा वक्त के गाल पर याद की छोटी-सी पप्पी जैसा ही लगता है।





नेटवर्क

कविता व चित्रः सुभाष बेजावाड़ा
अनुवादः शशि सबलोक

मेरे हिसाब से यह दुनिया
दो किस्मी लोगों से है
एक, जो जाते हैं जगह-जगह नेटवर्क के साथ
दूसरे, भटकते हैं दर-दर नेटवर्क के बिना
एक को मिलता रहता है सबकुछ मनचाहा
कोई मैसेज, ई-मेल, एसएमएस, फोन कॉल या फिक्रें
दूसरे नहीं जानते कि उनका मनचाहा है क्या
और वो तलाशते रहते हैं
जूतों की रैक के पीछे
रसोई के कैबिनेट में
सिंक के नीचे
अलमारी के पीछे
उसके नीचे या उसके पीछे
गर्म सूप के कटोरे के भीतर
क्या पता उन्हें कोई खज़ाना मिल जाए वहाँ
एक-आध छिपकली या कुछ और...





तितली और कली

शोभादेवी

चित्रः तापोशी घोषाल

हरी डाल पर लगी हुई थी नन्ही सुन्दर एक कली।
तितली उससे आकर बोली तुम लगती हो बड़ी भली।।

अब जागो तुम आँखें खोलो और हमारे संग खेलो।
फैले सुन्दर महक तुम्हारी महके सारी गली गली।।

कली छिटककर खिली रंगीली तुरत खेल की सुनकर बात।
साथ हवा के लगी भागने तितली छूने उसे चली।।

गली कैसे महके?

कृष्ण कुमार

निरंकार देव सेवक के साथ 'महके सारी गली गली' का सम्पादन करना मेरे जीवन के सबसे सुखद संयोगों में से एक है। लेकिन इस संकलन के प्रकाशित होने तक सेवक जी नहीं रहे। नेशनल बुक ट्रस्ट ने संकलन के लिए चित्र जगदीश जोशी से बनवाए। चित्रों की शैली और रंग, हर पन्ने का ले-आउट और मुखपृष्ठ दिखाता है कि नेशनल बुक ट्रस्ट ने संकलन की प्रांतीय संवेदना और हिन्दी की बाल-





कविता का उत्कर्षकाल उभारने में कितनी मेहनत की। ट्रस्ट के निदेशक अरविन्द कुमार ने 'महके सारी गली गली' पर चर्चा के लिए एक शाम निर्धारित की।

अच्छी-खासी संख्या में लोग आए। कुछ बच्चे भी आए। पूछा तो पता लगा कि वे सरदार पटेल विद्यालय के हैं। उनके हिन्दी अध्यापक भी साथ आए थे। चर्चा शुरू हुई तो पहले बच्चों को बुलाया गया। हर बच्चे के मुँह से एक जैसी तीखी आलोचना सुनकर लगा कि माजरा कुछ और है। वे अपनी समीक्षा लिखकर लाए थे। किसी में हरिऔध के शब्दों पर आपत्ति थी, कोई रामनरेश त्रिपाठी की तुक से नाराज़ था, तो कोई सेवक जी की व्याकरण से। असली बम तब फूटा जब इन बच्चों के हिन्दी अध्यापक की बारी आई। वे बोले, इस पुस्तक का शीर्षक ही गलत है।

उस शाम को छब्बीस साल हो चुके हैं, पर जो सबक मैंने और सभागार में बैठे कई हिन्दी लेखकों - जिनमें राजेन्द्र यादव शामिल थे - ने सीखा, वह मैं भूला नहीं हूँ। बाद में वही सबक मुझे पटना की एक सभा में सीखने को दोबारा मिला जब एक अध्यापक-सज्जन मेरे पास आकर बोले - 'महके सारी गली गली' गलत है और गलत ही रहेगी।

सबक यह था कि हिन्दी का अध्यापक मदांध होता है - वह व्याकरण का प्रभु है, कोई कितना ही बड़ा कवि हो, उसकी भाषा में त्रुटि निकाल सकता है। 'महके सारी गली गली' की रचयिता शोभादेवी मिश्र का नाम इतिहास और इंटरनेट में नहीं है। उनकी यह कविता 'बालसखा' में 1930 के दशक में छपी थी। बिम्बों, मुहावरों और स्थिति की तरलता शोभादेवी जिस अनायास शैली में पकड़ सकी हैं, वह आधुनिक हिन्दी के इतिहास बताती है। हिन्दी की ज़ुबान थी जिसे लोग बरतते थे; शिक्षा की कठोर छाया बच्चों और बड़ों के बीच बात और सोच का प्रशासन नहीं चलाती थी।

इस कविता में कहीं कोई आवाज़ नहीं है। वक्त शायद बहुत सुबह का है। गली में वाहनों का शोर नहीं है, लोग भी सो रहे हैं। हवा में भागना, तितली का आग्रह, छूने का खेल सभी कुछ कली के मन में चल रहा है। वह खिलेगी तो महक सारी गली में फैल जाएगी, ऐसा विचार आते-आते बदलकर गली-गली में फैल जाने की योजना बन जाता है। हिन्दी के अध्यापक का मद इस योजना को साकार नहीं होने देगा। उसे न इस भाषा की कहानी पता है, न उसके साहित्य की विरासत से कोई मतलब है। वह तो गलतियाँ निकालने के लिए नियुक्त है ताकि हिन्दी शुद्ध हो जाए और उस पर हमें गर्व हो। इस हृदयहीन इरादे से हिन्दी कैसे बचे, यह एक कठिन सवाल है।

अब चूँकि यह कविता एक पाठ्यपुस्तक में भी शामिल हो गई है, इसलिए इसकी पढ़ाई का क्रूर सिलसिला आप इंटरनेट पर भी देख सकते हैं। विडियो में शिक्षक की उँगली शब्दों पर फेरी जाती है, आवाज़ आती है कि 'डाल' का मतलब है टहनी, 'नन्ही' का अर्थ है छोटी, और 'भली' यानी सुन्दर। फिर पूरी कविता का सार बताया जाता है कली और तितली का संवाद, और 'संवाद' का अर्थ बताया जाता है 'बातचीत'। खेल खतम, पैसा हजम।



पतंग उड़ाने वाला बादशाह

शीरी मूसवीं
चित्रः बोस्की जैन

मैं व्यापार के लिए गुजरात से आगरा आया था। मुझे यहाँ के बादशाह को देखने की इच्छा हुई। उसी समय शाह तहमास्प का एक भरोसेमन्द सैयद बेग राजदूत बनकर आया था। उसके स्वागत के लिए शाही बाग में एक शानदार खेमा लगवाया गया था। सैयद बेग से मिलने बादशाह अकबर भी आने वाला था।

यह जानकर मैं भी उधर गया। जब मैं वहाँ था तो अचानक शोर हुआ 'बादशाह सलामत।' मैं समझ गया कि बादशाह आया है। मैंने इधर-उधर नज़रें दौड़ाईं पर बादशाह जैसी शानो-शौकत का कोई भी शख्स दिखाई नहीं पड़ा। मैंने लगभग 20 साल के एक खूबसूरत नौजवान को अपने साथी से झुककर बातें करते देखा। अन्दाज़ लगाया कि यही बादशाह है। वहाँ जो लोग थे, बहुत बेफिक्री से एक दूसरे से कँधे सटाए खड़े थे। एक बार मैंने बादशाह को लुँगी पहने महल की छत पर पतंग उड़ाते भी देखा था।

(साभारः अकबर के जीवन की कुछ घटनाएँ से)



स्वप्न और फंतासी

प्रस्तुतिः तेजी ग्रोवर
अनुवादः पूर्वा याज्ञिक कुशवाहा
चित्रः तापोशी घोषाल



सामना

तांग राजवंश की कथा (618-907)

चांग यी हूनान प्रान्त में एक आला अफसर था। चियेन्निंग उसकी इकलौती बेटी थी। वांग चू उसका रिश्तेदार था। चियेन्निंग और वांग चू दोनों साथ पले-बढ़े थे। और एक-दूसरे को बहुत पसन्द करते थे। चांग यी भी वांग चू को पसन्द करता था। वह उसे अपना दामाद बनाना चाहता था। दोनों बच्चों ने चांग यी की इस इच्छा को सुना और मन में उतार लिया।

चियेन्निंग का सारा समय वांग चू के साथ बीतता। दोनों के बीच प्रेम बढ़ता गया। बड़े होते-होते उनका रिश्ता भी गहराता गया। चांग यी इससे पूरी तरह बेखबर थे। सो जब एक नौजवान सरकारी मुलाज़िम ने उनसे उनकी बेटी का हाथ माँगा तो वो हाँ कर बैठे। वे अपनी पुरानी इच्छा को भूल चुके थे।

चियेन्निंग धर्मसंकट में फँस गई थी। एक ओर उसका प्रेम था तो दूसरी ओर पिता का वादा। उसकी भावनाएँ इस कदर आहत हुईं कि वो बीमार हो गई। मौत के बहुत करीब चली गई। अपने प्रेम को यूँ जाता देखने के ख्याल भर से वांग चू हताश हो गया। उसने वो जगह छोड़ जाने का फैसला कर लिया।

उसने बहाना बनाया कि उसे राजधानी जाना है। चांग यी कई कोशिशों के बाद भी उसे रोक न सका।

तो उसने वांग चू को पैसे, तोहफे और एक विदाई दावत दी। वांग चू ठण्डी आहें भरता रहा। अपने प्रेम को भुला देने का उसका फैसला और मज़बूत हो गया।

जल्द ही एक दोपहर वह नाव पर सवार सफर पर निकल पड़ा। थोड़ी ही देर में रात हो गई। उसने नाविक को नाव किनारे बाँधने को कहा ताकि वह सो सके। पर वांग चू को नींद नहीं आई। आधी रात के करीब उसने किसी के कदमों की आहट सुनी। वह उठा और ज़ोर-से बोला, "कौन है जो इस पहर चला आ रहा है?"

"मैं चियेन्निंग।" जवाब आया।

हैरानी और खुशी से वांग चू उसे नाव में ले आया। चियेन्निंग पिता से नाराज़ थी। और डरी हुई भी कि वांग चू अनजान जगह अकेले में कहीं खुद की जान न ले ले। वह वांग चू के साथ ही जीवन जीना चाहती थी। सो लोगों के कहे-सुने की परवाह किए बिना उसने अपने प्रेम को चुना। दोनों प्रेमी आगे के सफर पर चल दिए।

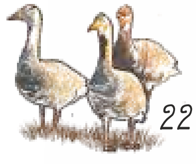
पाँच खुशनुमा साल गुज़रे। उनके दो बच्चे हुए। चियेन्निंग को अपने परिवार की कोई खोज-खबर न थी। बस यही एक बात उसे बहुत सालती थी। एक रात उसने अपनी चिन्ता वांग चू को बताई। कहीं गहरे उसके मन में अपराधबोध भी था। "तुम्हारा दिल एक नेक बेटी का है। मैं तुम्हारे साथ हूँ। पाँच साल गुज़र चुके हैं। अब तक तो उनकी नाराज़गी खत्म हो चुकी होगी। चलो, हम सब उनसे मिलने चलते हैं।" वांग चू ने कहा। चियेन्निंग खुश हो गई और बच्चों के साथ घर लौटने की तैयारी करने लगी।

जब उनका जहाज़ उनके शहर पहुँचा वांग चू ने चियेन्निंग से कहा, "पता नहीं तुम्हारे माता-पिता किस हाल में होंगे! पहले मैं अकेले जाकर पता लगा लेता हूँ।" घर को देखते ही वांग चू का दिल ज़ोरों से धड़कने लगा। ससुर को देख उसने झुककर सज़दा किया। उनसे अपने और चियेन्निंग की हिमाकत की माफी माँगी। चांग यी ने अचरज से उसे देखा और बोले, "क्या कह रहे हो? चियेन्निंग तो पिछले पाँच साल से बिस्तर पर बेहोश पड़ी है। एक बार तक नहीं उठी!"

"पर मैं आपसे सच कह रहा हूँ।" वांग चू बोला। "वह बिलकुल ठीक है और जहाज़ में इन्तज़ार कर रही है।"

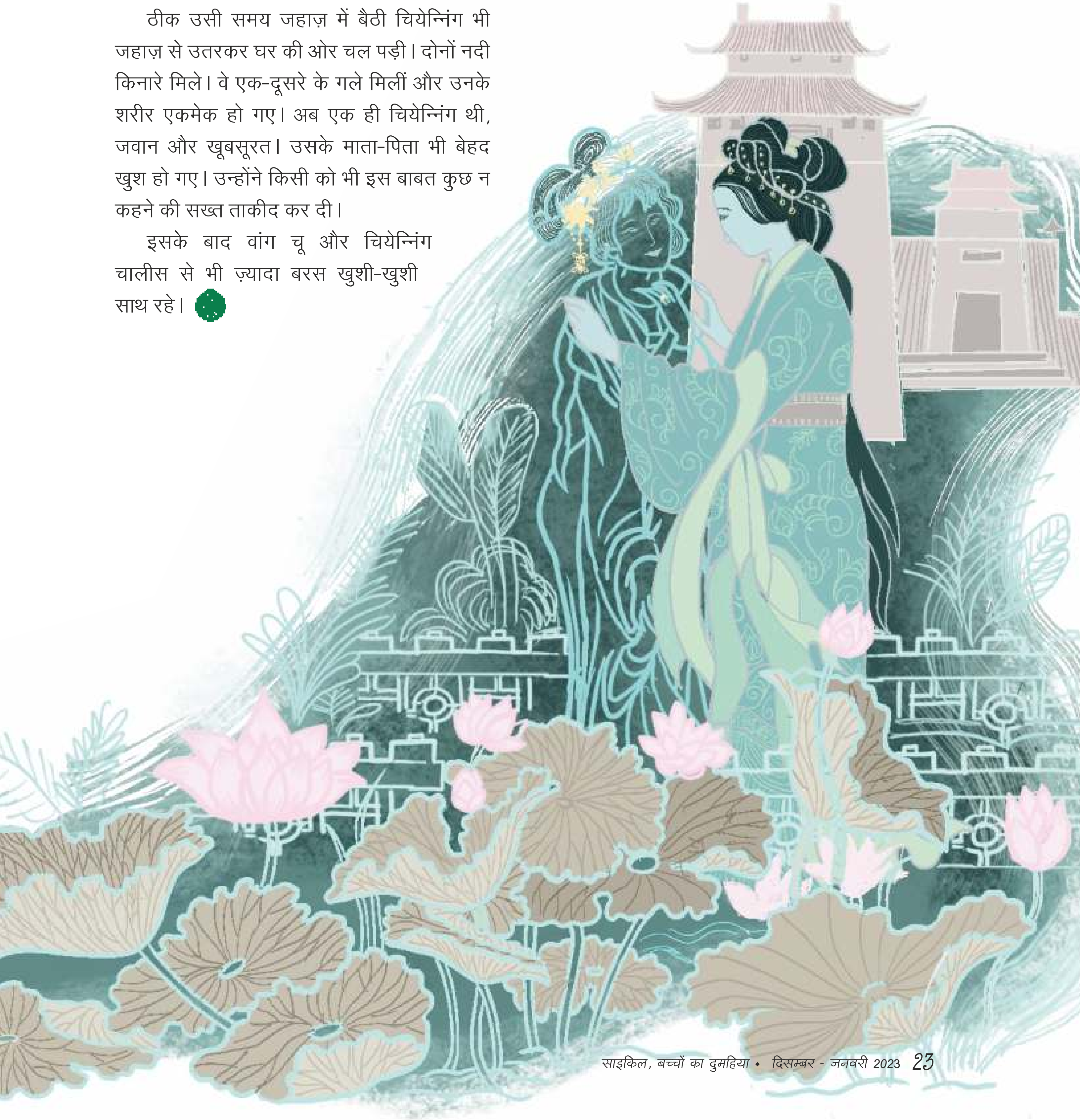
चांग यी बौखला गया। उसने दो सेविकाओं को जहाज़ पर भेजा। उन्हें चियेन्निंग सुन्दर कपड़ों में सजी-धजी बैठी मिली। उसने सेविकाओं के साथ अपने माता-पिता के लिए सलाम भेजा। हैरान सेविकाएँ घर लौटीं। उनकी बात सुन चांग यी की हैरत और बढ़ी। इधर बिस्तर पर बीमार पड़ी चियेन्निंग यह खबर सुन मानो रोग मुक्त हो गई। उसकी आँखों में चमक आ गई। बिस्तर से उठकर वह आईने के सामने खड़ी हो गई। फिर मुस्कराती हुई जहाज़ की ओर चल दी।





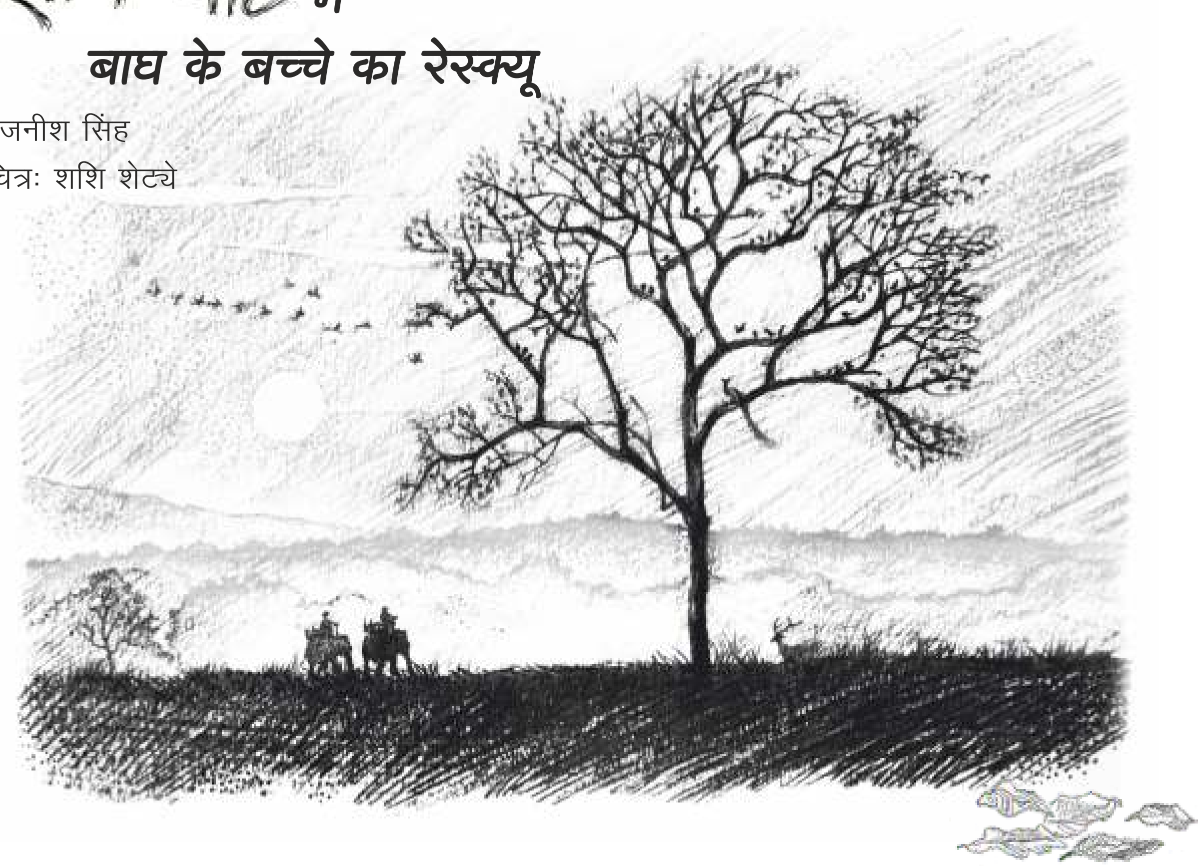
ठीक उसी समय जहाज़ में बैठी चियेन्निंग भी जहाज़ से उतरकर घर की ओर चल पड़ी। दोनों नदी किनारे मिले। वे एक-दूसरे के गले मिलीं और उनके शरीर एकमेक हो गए। अब एक ही चियेन्निंग थी, जवान और खूबसूरत। उसके माता-पिता भी बेहद खुश हो गए। उन्होंने किसी को भी इस बाबत कुछ न कहने की सख्त ताकीद कर दी।

इसके बाद वांग चू और चियेन्निंग चालीस से भी ज़्यादा बरस खुशी-खुशी साथ रहे।



भैसान घाट में बाघ के बच्चे का रेस्क्यू

रजनीश सिंह
चित्रः शशि शेट्ये



बाघ बहुत शक्तिशाली होते हैं। लेकिन उनके शावकों की बात अलग है। खासकर डेढ़ से दो साल की उमर तक। इस उमर में वे हर ज़रूरत के लिए अपनी माँ पर निर्भर होते हैं। उनके खाने-पीने और सलामती का ख्याल बाघिन माँ अकेले ही रखती है। एक शावक का पेट भरने के लिए लगभग 2 किलो मांस रोज़ चाहिए। चार शावक हैं तो उनके लिए 8 किलो। और इतना ही मांस खुद के लिए। यानी बाघिन माँ को लगभग रोज़ ही शिकार करना पड़ता है। बाघों के जानकार बताते हैं कि शिकार की 20-30 कोशिशों में से कोई एक सफल होती है। बाघ शक्तिशाली होते हैं तो उनके शिकार चतुर। बाघ की गंध या आहट मिलने पर वो खुद तो भागते ही हैं, ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाकर आसपास के सब जंगल वालों को भी चेता देते हैं।

माँ शिकार के लिए निकलती है तो शावकों को किसी सुरक्षित जगह छिपा जाती है। फिर भी दूसरे बाघों और शिकारी जानवरों का खतरा बना रहता है। छह माह के होते-होते आधे शावक भूख से या दूसरे जानवरों के हमले से मारे जाते हैं।

जब शावक लगभग 6 माह के हो जाते हैं तो माँ उनको जंगल में रहने के तौर-तरीके सिखाना शुरू कर देती है। जंगल में कुदरती खतरों से खुद को बचाने का हुनर तो माँ सिखा देती है मगर इंसानी

खतरों से निपटना तो वह खुद भी नहीं जानती! फन्दे या रेल आदि वाहन की चपेट में आने से कितने ही जानवर हर साल मारे जाते हैं।

फन्दे का एक किस्सा सुनिए-

बात कान्हा टाइगर रिज़र्व में मौज़ूद सरई टोला की है। 2016 का मार्च महीना था। सुबह के कोई साढ़े 8 बजे थे। वन महकमे के तीन लोग, एक बीट गार्ड और दो चौकीदार, सुबह की गश्त करके लौट रहे थे। अचानक उन्हें बाघ की दहाड़ सुनाई दी। वे चौकन्ने हो रुके। टोह लेने लगे कि आवाज़ कहाँ से आ रही है। अगले ही पल फिर दहाड़ सुनाई तो समझ में आया कि आवाज़ ठीक बगल से आ रही है। फिर क्या था, कोई जान बचाने दौड़ पड़ा तो कोई पास के पेड़ पर चढ़ गया। दहाड़ें सुनाई देती रहीं। दहाड़ सुनाई दे रही थी लेकिन यह समझ नहीं आ रहा था कि माजरा क्या है? बाघ कहाँ है? पेड़ से उतरने और दहाड़ का पीछा कर उस तक पहुँचने की हिम्मत किसी की नहीं थी। मगर पेड़ पर भी कोई कब तक चढ़ा रहता? हिम्मत जुटाकर तीनों नीचे उतरे। अब तक इस बात का अन्दाज़ लग गया था कि आवाज़ पास के नाले से आ रही है। और लगातार एक ही जगह से आ रही है। इसलिए वायरलैस से वरिष्ठ अधिकारियों को सूचना दी गई। इलाके के डिप्टी रेंजर तुरन्त ही मौके पर पहुँच गए।

लगभग आधा घण्टा बीत चुका था। दहाड़ की आवाज़ पहले से धीमी हो गई थी और रुक-रुककर आ रही थी। चारों इस नतीजे पर पहुँचे कि बाघ किसी मुसीबत में है। वह शायद हिलडुल नहीं पा रहा है इसलिए आवाज़ एक ही जगह से आ रही है!

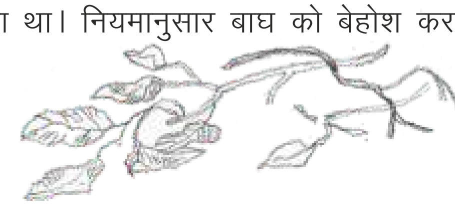




डिप्टी रेंजर ने कहा कि मैं नाले के पास वाले पेड़ पर चढ़कर देखता हूँ। पास ही एक बड़ा पेड़ था। वे दबे पाँव उस पर चढ़ गए। वहाँ से उन्हें नाले के किनारे पेड़ की जड़ों के पास बाघ की एक झलक दिखी। लगभग उसी समय बाघ ने भी उन्हें देखा और ज़ोर से दहाड़ा। घबराहट में डिप्टी रेंजर का सन्तुलन बिगड़ा और वे धम्म से नीचे आ गिरे। साथी कर्मचारी उनकी मदद के लिए दौड़े। इस आपाधापी में वे सब बाघ के सामने पहुँच गए। उन्होंने देखा कि वह बाघ का बच्चा है जो किसी कारण से हिलडुल नहीं पा रहा है।

यह खबर मुझको दी गई। इस छोटे से सन्देश में कई बातें छिपी थीं। बाघ शावक किसी मुसीबत में है। शावक है तो उसकी माँ भी आसपास ही होगी! अच्छा यह है कि वह जीवित है। माँ अपने बच्चे के पास क्यों नहीं आ रही है? क्या वह भी किसी मुसीबत में है? वह ज़िन्दा भी है या नहीं? मैं तुरन्त सरई टोला की ओर निकल पड़ा। तब तक दिन के दस बज चुके थे। मुझे वहाँ पहुँचने में एक घण्टा लगा। मैंने शावक को देखा। वह पूरी तरह स्वस्थ्य लग रहा था। इसका मतलब यह था कि उसे नियमित भोजन मिल रहा था। शावक के लिए माँ ही भोजन जुटाती है, यानी वह अब तक माँ के साथ ही रह रहा था। मतलब माँ ज़रूर आसपास ही होगी। जंगलों में आप भले ही बाघ को ना देख पाएँ पर बाघ आपको देख लेता है। इसलिए बाघ के बच्चे के पास रहना निरी मूर्खता ही थी। सुरक्षित यही था कि हाथियों पर सवार होकर शावक के पास जाया जाए। हमने तुरन्त ही हाथियों को बुलाने के लिए सन्देश भेज दिया। उन्हें 20-25 किलोमीटर चलकर पहाड़ के दूसरी तरफ से आना था। इसलिए यह तय था कि उनके पहुँचने तक शाम हो जाएगी। शावक की सही हालत जानने के लिए यह ज़रूरी था कि डॉक्टर उसका परीक्षण करें। इसलिए वन्यप्राणी चिकित्सक डॉक्टर अग्रवाल को बुलाया गया। उन्हें 150 किलोमीटर दूर मण्डला से आना था। नियमानुसार बाघ को बेहोश करने की

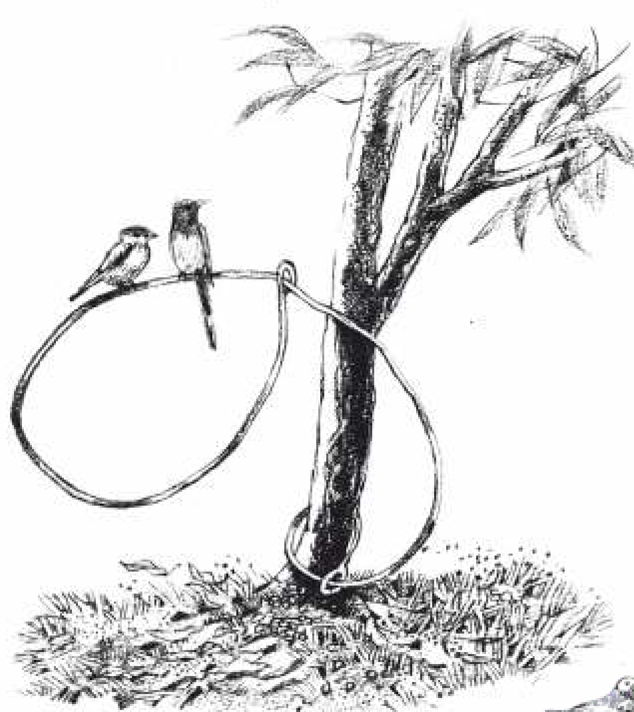




अनुमति मुख्य वन्य प्राणी अभिरक्षक से लेनी होती है। इसलिए उनको भी पूरा मामला बताया गया। साढ़े चार बजे तक उस जगह पर डॉक्टर और दूसरे अधिकारी पहुँच गए थे। शाम होते-होते 3 हाथी भी सरई टोला आ गए।

बाघ शावक के पास जाने के लिए एक हाथी पर मैं और डॉक्टर अग्रवाल बैठे, बाकी दो पर हमारे एक-एक साथी। हाथी पर सवार होकर हम नाले के दूसरी तरफ पहुँचे। अब बाघ का बच्चा साफ नज़र आ रहा था। डॉक्टर अग्रवाल ने दूर से ही ट्रेंक्विलाइज़िंग गन से शावक पर बेहोशी का इंजेक्शन दागा, जो उसकी कमर पर जाकर लगा। इस तरीके से वयस्क बाघ को बेहोश होने में 15-20 मिनट लगते हैं। शावक पिछले 12 घण्टे या उससे अधिक समय से एक ही जगह पर थका और परेशान बैठा था, इस कारण दो-तीन मिनट में ही बेहोश हो गया। हाथियों को शावक के दोनों तरफ खड़ा करके सुरक्षा घेरा बनाया गया। फिर डॉक्टर अग्रवाल हाथी से उतरकर शावक का मुआयना करने गए। उसकी कमर में क्लच वायर का फन्दा फँसा हुआ था। उन्होंने इशारे से हाथों के दस्ताने, ज़रूरी दवाइयों का डिब्बा, आँख ढँकने के लिए कपड़ा, स्ट्रेचर, शरीर का तापमान नियंत्रित करने के लिए वाटर स्प्रे और थर्मामीटर माँगा। डॉक्टर ने शावक के पूरे शरीर पर हाथ फिराकर देखा, उसे कहीं कोई चोट नहीं लगी थी। यह चमत्कार ही था कि 12 घण्टे से ज़्यादा समय से फँसे होने के बावजूद उसके शरीर पर एक भी खरोंच नहीं थी। उसका पेट भरा हुआ था और स्वास्थ्य भी ठीक लग रहा था। बेहोशी की दवा के कारण उसके शरीर का तापमान बढ़ने की आशंका थी, इसलिए रेस्क्यू दल पल-पल पर शावक का तापमान माप रहा था। तापमान ठीक रखने के लिए उसके शरीर पर पानी का स्प्रे किया जा रहा था। वह कुछ मिनटों के लिए इंसानों के सम्पर्क में आया था जिससे वह ऐसे जीवाणुओं से संक्रमित हो सकता था जो उसे बीमार कर दें। इससे बचने के लिए शावक के शरीर पर एन्टीबायोटिक दवाएँ छिड़की गईं। फन्दा काटकर उसे स्ट्रेचर पर लिटा दिया गया। जब उसे ले जाने लगे तो ध्यान आया कि माँ आसपास ना हो! अपने बच्चे को इस हालत में देखकर वह हमला कर सकती है। ऐसी हालत में हाथियों से भी थोड़ी ही सुरक्षा मिलती है। बाघ के आने पर उनकी सहज प्रवृत्ति भी जान बचाने के लिए भागने की ही रहती है।

वन्य प्राणी आदतन एक ही रास्ते पर चलते हैं। शिकारी उनकी इस आदत का नाजायज़ फायदा उठाते हैं। वे उनके आने-जाने के रास्ते पर फन्दे लगा देते हैं। जानवरों के आकार और उनकी ताकत आदि के हिसाब से अलग-अलग जानवरों के लिए





अलग-अलग फन्दे बनाए जाते हैं। जैसे खरगोश का फन्दा ज़्यादा मज़बूत नहीं होता, पर सुअर पकड़ने के लिए मज़बूत फन्दा लगाया जाता है। बड़े आकार के हिरण को पकड़ने के लिए ऊँचाई पर फन्दा लगाया जाता है। बाघ का यह शावक सुअर के बराबर था, इसलिए सुअर को पकड़ने के लिए लगाए गए फन्दे में फँस गया था।

स्ट्रेचर को हमने अपने ट्रक के पास सुरक्षित जगह पर रख दिया। अब यह फैसला करना था कि आगे क्या करें?

यदि रेस्क्यू किए शावक की माँ जीवित हो तो सब यही चाहते हैं कि बच्चा अपनी माँ से मिल जाए। शावक को माँ से मिलवाने की कोशिश में उसे रेस्क्यू वाली जगह पर एक पिंजरे में रखा जाता है। फिर बाघिन माँ का इन्तज़ार किया जाता है। लेकिन यह इतना सरल भी नहीं है। पिछले कई दशकों में ऐसा बहुत कम हुआ है कि रेस्क्यू किया शावक माँ से मिल जाए। मैं तेंदुआ शावकों को उनकी माँ से मिलवाने की दो कोशिशों को नाकाम होते देख चुका हूँ। दोनों ही मौकों पर माँ बच्चे को लेने नहीं आई। उल्टे इन





कोशिशों के कारण शावकों की तबीयत इतनी खराब हो गई कि उन्हें बचाया नहीं जा सका।

रेस्क्यू किए जिन शावकों की माँ मर चुकी होती है उन्हें चिड़ियाघरों या रेस्क्यू सेन्टर में रखा जाता है।

लगभग इसी समय कान्हा टाइगर रिज़र्व के संचालक वहाँ पहुँचे। उन्होंने पूरी घटना जानी। शावक के हालचाल लिए और कहा कि हम इस शावक को इसकी माँ से मिलवाने की कोशिश करेंगे।

तब तक शाम के लगभग 6 बज चुके थे। मार्च के दिन थे। अँधेरा अपने पैर पसारने लगा था। हमें तुरन्त ही एक ऐसी जगह तय करनी थी, जहाँ शावक को पिंजरे में रखकर उसकी माँ के आने का इन्तज़ार किया जाए। थोड़ी कोशिश के बाद ऐसी जगह मिल गई जहाँ पेड़ की छाया में पिंजरे को रखा जा सकता था। ट्रक पिंजरे के पीछे खड़ा करना था। जब माँ आए तो पिंजरे के गेट को खोलना था। इसके लिए ऐसी व्यवस्था की जाती है कि पिंजरे के पास जाए बिना माँ के आने पर गेट खोला जा सके। गेट को एक रस्सी से बाँधते हैं। रस्सी को पेड़ की डाल के ऊपर से लेते हुए दूसरा सिरा रस्सी खींचने वालों के हाथ में रखा जाता है। जो पिंजरे से दूर सुरक्षित रहकर गाड़ी में बैठकर माँ के आने का रास्ता देखते हैं। ताकि उसके आते ही गेट खोल दें।

बाघ अथवा शावक को अधिक देर तक बेहोश नहीं रखा जा सकता। जल्दी ही बेहोशी दूर करने की दवा ना दी जाए तो उनकी मृत्यु होने का खतरा रहता है। इसलिए बाघ को स्ट्रेचर से उठाकर पिंजरे में रख दिया गया था। और उसे बेहोशी दूर करने की दवा भी दे दी थी।

पिंजरे को तय की गई जगह पर रख दिया गया। शावक लम्बे समय से भूखा प्यासा भी था इसलिए पिंजरे के भीतर एक बर्तन में पानी और खाने के लिए मांस भी रख दिया था। शावकों को जब बकरे या मुर्गे का मांस दिया जाता है तो उसके पंख, हड्डी और बाल अलग नहीं किए जाते। इनसे शावक को खाना पचाने में मदद मिलती है।

शाम के 7 बजने वाले थे। अँधेरा हो चुका था। बाघिन पास हो तो वह पिंजरे तक सहज आ सके इसलिए वहाँ होने वाली हलचल को बन्द किया। सभी कर्मचारी वहाँ से रवाना हो गए। एक ट्रक में तीन कर्मचारी रुके। ताकि वे बाघिन के आने पर रस्सी खींचकर पिंजरे का गेट खोल सकें। हमारी 40 लोगों की टीम भूख प्यास की परवाह किए बिना सुबह से शावक को बचाने में लगी थी। तीन जवाबदार कर्मचारियों की ड्यूटी रस्सी खींचने वाले वाहन पर लगाई गई थी। उनको बाघिन का इन्तज़ार करते रात भर बैठना था। जब हम वहाँ से जाने लगे तो ख्याल आया कि इन तीनों ने भी सुबह से कुछ नहीं खाया है। उनके लिए भोजन का इन्तज़ाम कर बाकी सभी वापिस लौट आए।

अब हम केवल आशा ही कर सकते थे कि सब कुछ वैसा ही हो जैसा हम चाह रहे थे। बाघिन के आते ही हमारे साथी पिंजरे का गेट खोल देंगे। शावक दौड़कर पिंजरे से बाहर आएगा और माँ के साथ अपने जंगल में गुम हो जाएगा।

मैं लौटकर मुक्की आ गया। सरई टोला से किसी अच्छी खबर के आने के इन्तज़ार में अपना फोन और वायरलैस साथ में रखकर सो गया। रात के लगभग 2-3 बजे तक थोड़ी-थोड़ी देर में ट्रक में बैठे साथियों से पूछता रहा, “बाघिन माँ आई क्या?” हर बार ना में जवाब मिलता रहा तो लगा, माँ अब शायद ही आए।

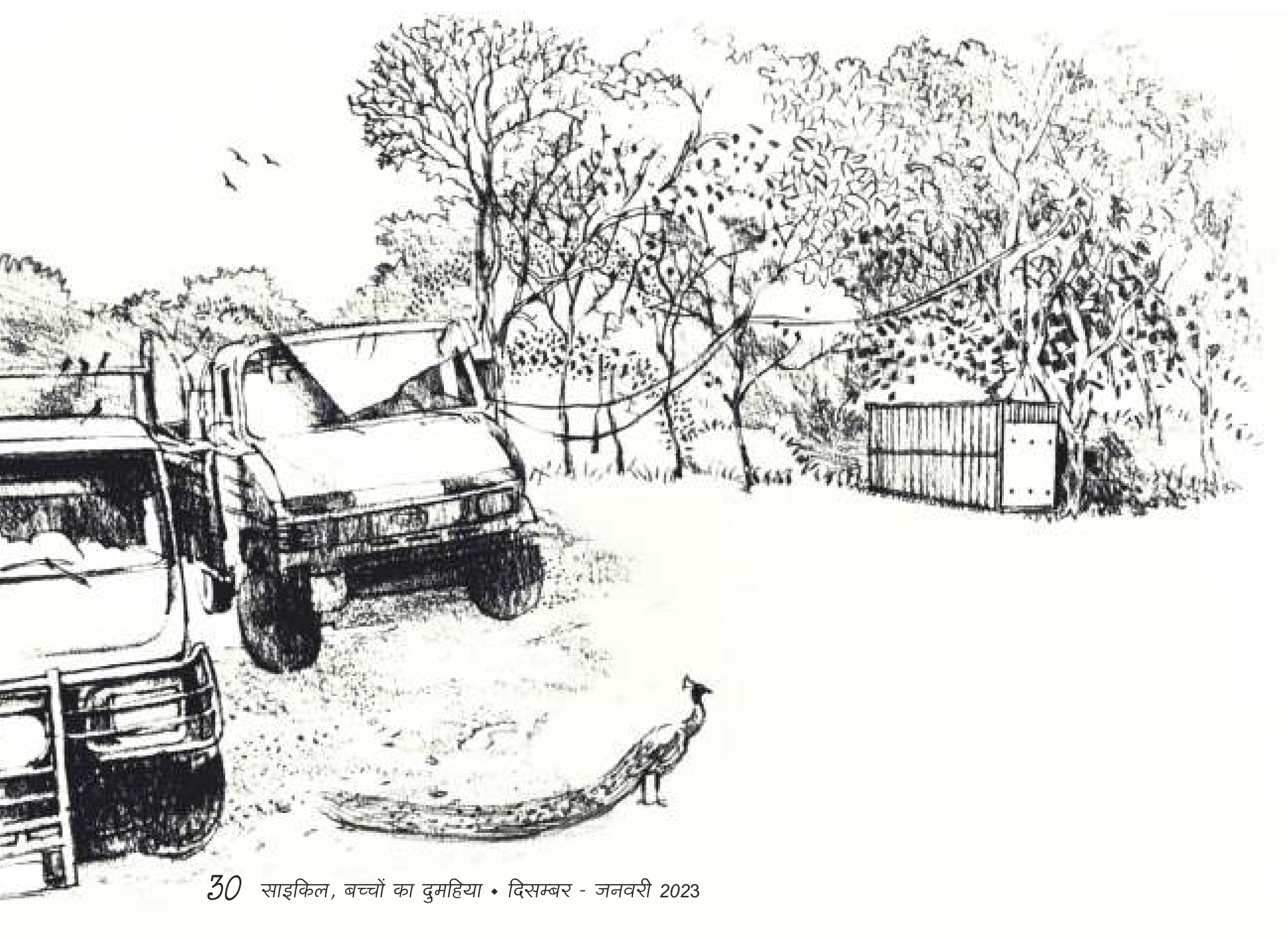


सुबह आँख खुली तो 6 बज चुके थे। मैंने फिर फोन लगाया। जवाब ना में ही मिला। मेरा भरोसा अब पूरी तरह टूटने लगा था। अब इस शावक को हमें चिड़ियाघर या रेस्क्यू सेन्टर में भेजने की तैयारी करनी चाहिए। मैंने फोन लगाकर क्षेत्र संचालक को जानकारी दी। कहा कि हमें नहीं पता कि शावक की हालत कैसी है। आप अनुमति दें तो हम शावक को पिंजरे सहित चिड़ियाघर या घोरेला के रेस्क्यू सेन्टर भेज दें।

उन्होंने कहा, "आप लोगों ने इस शावक को माँ से मिलवाने के लिए एक पूरा दिन और पूरी रात मेहनत की है। इसे इसकी माँ ने नहीं छोड़ा बल्कि यह इंसान की गलती के कारण माँ से अलग हुआ है। इसलिए हमें एक दिन और कोशिश करनी चाहिए। आप लोग देखिए, हो सकता है, माँ हमारी किसी गलती के कारण नहीं आई हो।"

अपने कामों पर सोच विचार करने और आगे की योजना बनाने के लिए हमने मीटिंग की। हमारी बातचीत से उभरकर आया कि पिछली कोशिश के दौरान रात में देर तक वहाँ हलचल होती रही थी। गेट खोलने के लिए रात रुके साथियों ने बताया कि हमें रात में इस बात के संकेत मिलते रहे थे कि बाघिन आसपास ही है। यह जानकर हमें फिर से जुट जाने की हिम्मत मिली।

हमने तय किया कि अगले 3-4 घण्टे वहाँ कोई नहीं जाएगा। गेट खोलने के लिए पिछली रात वाले साथी ही रहेंगे। पर इस बार वे बड़े वाहन से ना जाकर मोटर साइकिल से जाएँगे। किसी तरह के





शोर से बचने के लिए वे अपनी मोटर साइकिल पिंजरे से बहुत पहले रोककर पैदल ही ट्रक तक जाएँगे।

ऐसा ही किया गया।

रात 2 बजे तक मैं ट्रक में बैठे साथियों से बार-बार पूछता रहा। जवाब में "माँ अभी तक नहीं आई।" सुन-सुन कर मैं निराश हो गया। दो दिन की भागदौड़ के कारण नींद आई ही थी कि सुबह-सुबह 4 बजे ट्रक में बैठे साथियों का फोन आ गया, "साहब सुबह होने वाली है। माँ अभी तक नहीं आई हम लौट आते हैं। रात भर से गाड़ी में बैठे-बैठे हमारी हालत खराब हो गई है। नित्यकर्म करने के लिए ट्रक से उतरना ही पड़ेगा।"

उनकी बात भी ठीक थी। पर ज़रा-सी चूक से दो दिन की मेहनत पर पानी फिर सकता था। इसलिए मैंने उनसे कहा, "दो घण्टे में सुबह हो जाएगी। अँधेरे में ट्रक से उतरना जोखिम भरा हो सकता है।"

6 बजे फिर उनका फोन आया, "साहब गाड़ी में बैठा नहीं जा रहा। माँ नहीं आई, हम लौट आते हैं।"

मैं उनसे कह ही रहा था कि उतर जाओ पर ट्रक के पास ही रहना कि उधर से आवाज़ आई, "साहब आ गई! बाघिन आ गई!" वो बताते जा रहे थे। "बाघिन पिंजरे के पास आ रही है। वो पिंजरे से थोड़ा पहले चुपचाप बैठ गई है।"

मैं उत्साह से बोला, "जल्दी से गेट की रस्सी खींचो!"

मन में यही आ रहा था कि एक अद्भुत् घटना घटने वाली है। अभी पिंजरा खुलेगा और शावक अपनी माँ के पास होगा।

"साहब रस्सी नहीं खिंच रही है। हम तीनों ताकत लगा रहे हैं पर गेट ऊपर ही नहीं हो रहा है!"

उधर से यह सुनकर मुझे कई हज़ार वॉट के करंट जैसा झटका लगा। कामयाबी के इतने करीब आकर हम असफल हो रहे थे। वे तीनों युवा और ताकतवर थे। कोई सोच भी नहीं सकता था कि उनसे रस्सी नहीं खिंचेगी। अपना फोन चालू रखते हुए मैं उन्हें और ताकत लगाने के लिए उकसा रहा था। तभी मेरे दिमाग में आया कि ट्रक के भीतर ताकत लगाने लायक जगह ही नहीं है। मैंने उनसे कहा कि चुपके से ट्रक का दरवाज़ा खोलकर एक व्यक्ति नीचे उतरकर रस्सी खींचे। बाघिन दस फीट पर थी। ट्रक से उतरना खतरनाक था। फिर भी उन्होंने ऐसा ही किया। और पिंजरे का गेट खुल गया।

अगला हर पल एक-एक साल के बराबर था। मैं यह सुनने को व्याकुल था कि बाघिन माँ पिंजरे के पास आई और शावक को बाहर निकाल लिया। लेकिन अगले एक मिनट तक ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। आशंका हुई कि दो दिन से पिंजरे में बन्द शावक कहीं बीमार तो नहीं हो गया। लोगों से सुनी

यह बात भी याद आई कि इंसान का हाथ लग जाए तो जानवर अपने बच्चों को साथ नहीं ले जाते। ना तो शावक बाहर निकल रहा था न माँ आगे बढ़ रही थी। सब दम साधे हुए थे। इस बीच उधर से चिल्लाने की आवाज़ आई, "वो निकल गया!"

उन्होंने बताया कि शावक ने अचानक छलाँग लगाई और माँ के पास चला गया। फिर दोनों लम्बी छलाँग लगाते हुए तेज़ी-से जंगल में जाकर ओझल हो गए।

बाघों की दुनिया में यह अनूठी घटना थी। मेरी जानकारी के अनुसार ऐसा अब तक नहीं हुआ था। कान्हा जैसे जंगलों में रोज़ कुछ ना कुछ घटता ही रहता है। पर यह घटना सबसे रोशन और जुदा थी।

दो दिन बाद मेरे अधिकारी दौरे पर आए। उन्होंने पूछा, "पिंजरे के पास हमने जो कैमरा ट्रेप लगाया था। उसकी तस्वीरें कहाँ हैं?"

मुझे उसी समय याद आया कि मैं वो तस्वीरें बुलवाना तो भूल ही गया। मैंने रेंज ऑफिसर को फोन करके तस्वीरें भेजने को कहा। उन्होंने कहा कि वो तो अभी सरई टोला में ही है। मैं कैमरा निकलवाकर भेजता हूँ।

कुछ देर बाद मेरे ईमेल पर तस्वीरें आईं। हम उनको देखने लगे। कैमरा ट्रेप के सामने किसी तरह की हलचल होने पर वह हरकत में आता है और तस्वीर खींच लेता है। अधिकतर फोटो पहले दिन कैमरा लगाने से लेकर रात 9-10 बजे तक की थीं। हमारी रुचि तो वे तस्वीरें देखने में थी जब बाघिन माँ अपने बच्चे को लेने आई थी।

सारी तस्वीरें हम लोगों की थीं। सिर्फ एक तस्वीर बाघिन और शावक की थी। उसमें वे पिंजरे के सामने बैठे थे। यह देखकर हम आश्चर्यचकित रह गए। हैरत इस बात पर थी कि उस सुबह जब माँ शावक को लेने आई तब ऐसा कुछ नहीं हुआ था।

तस्वीर पर दर्ज समय देखने पर पता चला कि वह उस दिन शाम 6 बजे की तस्वीर थी। बाघिन अपने शावक को लेकर पिंजरा देखने आई थी। और दोनों कुछ देर वहीं बैठे रहे थे।





चित्रः शिवम चौधरी



पंखा चलाओ तो इतनी सारी हवा कहाँ से आ जाती है?

आकल्पनः सुशील शुक्ल

चित्रः ऋषि सहानी


TED
MUSIC

पीलू पक्कियाँ...

जनक वैद

चित्रः शिवम चौधरी

एक थी घुग्गी। उसका एक बेटा था – टोटनू।

एक बार घुग्गी ने पीलू (एक फल) तोड़ कर एक भगौना भरा और सुखाने के लिए ज़मीन पर फैला दिया। फिर वो और पीलू लाने चली गई।

जाने से पहले टोटनू से बोली, "फलों का ध्यान रखना। कोई खा ना जाए।"

टोटनू ने कहा, "ठीक है माँ! मैं ध्यान रखूँगा। आप चिन्ता न करना।"

इतना कह वह सुबह से शाम तक पीलू के पास बैठा रहा।

घुग्गी जब घर आई तो उसने सूखी पीलू भगौने में डाली।

और ज़ोर-से बोली, "टोटनू! मैंने तो भगौना भर पीलू सुखाने को डाली थीं। पर यह तो आधा है? ऐसा कैसे हो गया? तू चोर है।" इतना कह घुग्गी छड़ी से उसे मारने लगी।

छड़ी की मार से बच्चे का बदन दर्द देने लगा। उसे दुख भी हुआ कि माँ ने उसे चोर कहा। इसलिए माँ को बताए बिना वो दूर नानी के घर चला गया। और रो-रो कर सारी बात बताई।

नानी ने उसे गोदी में ले पुचकारा और मरहम पट्टी की।

और कहा कि तेरी माँ लेने भी आए तो नहीं भेजूँगी। जब तक वह अपनी गलती नहीं मान लेती तू इधर ही रहेगा।

घुग्गी भी थी अक्खड़ मिजाज़। उसने सोचा कि जब तक सुधरता नहीं पड़ा रहे नानी के घर।

कुछ समय बाद पीलू का मौसम खत्म हो गया। घुग्गी ने खाने के लिए कुछ सूखी पीलू पानी में डालीं। थोड़ी देर बाद वे फूल कर दुगनी हो गईं। घुग्गी को अपनी गलती का एहसास हुआ। वह बहुत पछताई। फूली पीलू को सामने रख वह रोते हुए बोली,

"ऊ ऊँ ऊँ, ऊ ऊँ ऊँ
बच्चा टोटनू
पीलू पक्कियाँ
खा ना सक्कियाँ।
मार भगाया,
वापस ना आया।"

वह रोती हुई माँ के पास गई। हाथ जोड़ अपने बच्चे से माफी माँगी। और उसे घर ले आई।

टोटनू घर आ गया पर घुग्गी अभी तक यह गीत गाती है –

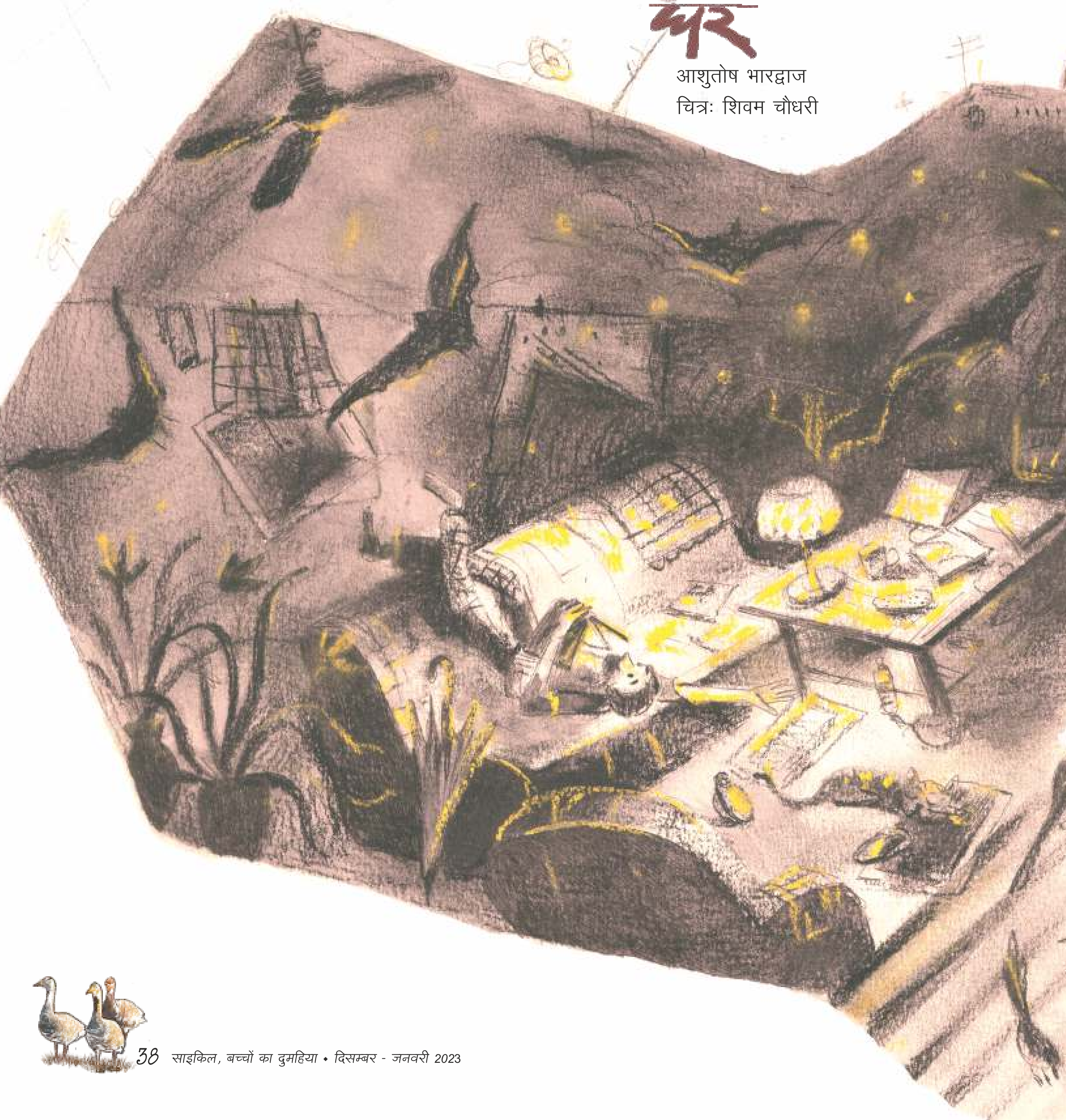
पीलू पक्कियाँ ...खा न सक्कियाँ....





घर

आशुतोष भारद्वाज
चित्रः शिवम चौधरी





बरसात चमगादड़ों का मौसम है। इन रातों को जब हवा में नमी गहराती है, मेरे घर में अकसर चमगादड़ आ जाते हैं। मैं तुरन्त बत्ती बुझा देता हूँ। वे पूरे हॉल में चक्कर काटते हैं। बेचैन मण्डराते हैं। कोई मेरे चेहरे को छूता-सा भी निकल जाता है।

वे न मच्छर की तरह काटते हैं, न मकोड़ों की तरह। सुबह कमरे में मुर्दा बिखरे दिखाई देते हैं।

सिर्फ मण्डराते हैं। थक कर चले जाते हैं।

कमाल इंसान हैं! छोटी-सी खिड़की से कमरे की परिक्रमा लगाने आते हैं।

शुरुआती दिनों में मैं थोड़ा सतर्क हो जाता था। वे उड़ते हुए मेरी तरफ आते थे। झुकने और बचने की कोशिश करता था। लेकिन जल्द ही मुझे पता चल गया कि न वे मुझे कोई चोट पहुँचाएँगे, न अपना रास्ता रत्ती भर बदलेंगे। मैं सोफे पर मूर्ति-सा बैठा रहता हूँ। वे ऊपर से निकलते जाते हैं। किसी हवाई जहाज़ की तरह एक निर्धारित लकीर पर उड़ते हैं। पता नहीं लोग गौरैया जितनी देह के इस प्राणी से क्यों डरते हैं।

उन्हें अँधेरा सुहाता है। बत्ती जली हो तो जल्द चले जाते हैं।

शुरुआत में सिर्फ हॉल का चक्कर लगाते थे। कुछ दिनों से दो-चार फेरे दूसरे कमरे के भी लगा आते हैं।

अकसर जोड़े से आते हैं। दो एक साथ। कुछ देर पहला अपने साथी के पीछे उड़ता है। फिर दूसरा पहले के पीछे। पता नहीं रोज़ वही दो आते हैं या पारी बदल जाती है? अभी तक उन्हें पहचान नहीं पाया हूँ। इस गति से उड़ते हैं कि पहचानना मुश्किल है। कैमरा लगा हो तो शायद उनकी हरकतों, फितरतों को दर्ज किया जा सकता है।

शाम को घर लौटने पर सबसे पहले हॉल की खिड़की खोलता हूँ। उनके आने का समय तय है। अगर देर रात लौटूँगा, वे नहीं आएँगे।

जिस तरह मैं उनकी उम्मीद लिए घर लौटता हूँ ज़रूर वे भी किसी पेड़ पर इन्तज़ार करते होंगे। कि कब सामने वाले घर की खिड़की खुले और वे अन्दर चले आएँ।

कब्रिस्तान

पूर्ति बापट
चित्रः शिवम चौधरी

मेरे पास कई डिब्बे हैं। हर डिब्बे में कहानियाँ हैं। इन कहानियों को मैं तभी सुन पाता हूँ जब कोई यहाँ आता है और उन कहानियों को याद करता है। मेरा दिल टूटता है जब किसी छोटे से डिब्बे से खिलखिलाने की कोई कहानी सुनाई देती है। कभी-कभी कुछ मज़ाकिया किस्से भी सुनाई देते हैं। तब अकसर दोस्तों की कोई मण्डली अपने किसी खोए दोस्त को याद कर रही होती है।

रात को टिमटिमाते तारों को देखता हूँ। डिब्बों को गिनता हूँ और तारों को गिनता हूँ। इन गिनतियों की भी तो कितनी कहानियाँ हैं। मेरे लोहे के जंग खाए गेट को कोई पार नहीं करना चाहता है। डरते हैं लोग मुझसे। मेरी खामोश ज़मीन से। मेरी कहानियों से। मेरी ज़मीन इन डिब्बों को रखे-रखे थक गई है। कुछ सालों की लीज़ बाकी है।

मेरा भी एक मन है। मैं सोचता हूँ कि कभी यहाँ इस ज़मीन पर आम के पेड़ लगें। मैं अब कुछ नई कहानियाँ सुनाना चाहता हूँ। धूप में अमियों को मीठा आम होते देखना चाहता हूँ। ...एक पल रुकना..क्या तुम्हें फूलों की खुशबू आई...लगता है कि एक और कहानी आई है। मेरे दामन में एक और डिब्बा आ रहा है।







पीरियड डायरी

नेहा सिंह

चित्रः सानिका देशपाण्डे





प्रिय डायरी,

आज तो हद ही हो गई है। मैथ की क्लास के बाद जब प्रिया उठी तो इत्ता बड़ा-सा गुलाबी दाग था।

अब पूरी क्लास में बस मैं बची हूँ। सब आपस में खुसपुस करती हैं।

"तू कौन-सा यूज़ करती है?"

"तुझे कितने लगते हैं?"

"मुझे तो पहले दिन बोहत दर्द होता है।"

"मेरे लिए पता है, पापा इतने स्वीट हैं, गरम पानी का बैग बना-बना कर रात भर देते रहते हैं।" सबके पास इतना कुछ होता है बताने को?

कब आएगा, मेरा पहला पहला पीरियड?

वो पेट के क्रैम्प्स, स्टेंड कपड़े। मुझे भी अपनी सहेलियों को अपने पीछे चला कर धीरे-से पूछना है, "कुछ लगा तो नहीं है न?"

मुझे भी क्लास के लड़कों को डॉटकर कहना है, "तुम्हारे मतलब की कोई बात नहीं हो रही है यहाँ पर। गेट आऊट।"

हाँ, पर अगर ज़ीशान ने कभी पूछा तो मैं उसको सब खुलकर बताऊँगी।

खैर, मैं क्या कह रही थी?

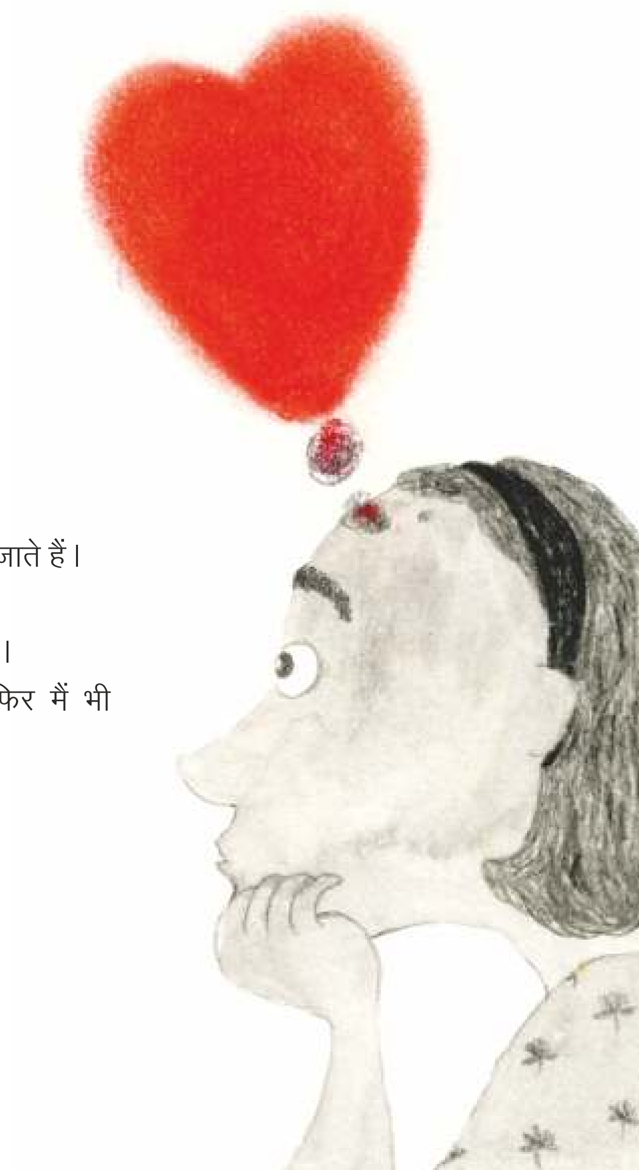
हाँ, तो मुझे भी मन करता है कि मैं दुकान में भैया को हलके से कहूँ, "भैया, वो देना, ग्रीन वाला, दस वाला पैकेट।" और काली पॉलिथीन को हिफाज़त से अपने बैग में रखकर घर लाना है।

पर पता है, मुझे आज तक यह समझ नहीं आया कि पैड्स को काले पॉलीथीन में क्यों देते हैं?



मुझे भी मम्मी के पास जाके रोते-रोते कहना है कि
"मम्मी, मम्मी देखो न क्या हो रहा है।
कहीं मुझे ब्लड कैंसर तो नहीं हो गया?"
हालाँकि मुझे पता सब है।
पता सब है पर फायदा?
सिर्फ थ्योरी जानकार क्या होता है? प्रैक्टिकल भी तो करना है ना लाइफ में।
कहीं ऐसा तो नहीं कि मुझे कभी पीरियड्स होंगे ही नहीं? ऐसा भी होता है क्या?
हो भी सकता है। मुझी में कुछ प्रॉब्लम है। लाइफ में इत्ती सारी प्रॉब्लम्स पहले से ही हैं।
यह एक और?
नहीं, ऐसा नहीं है।
सब कुछ ठीक होगा।





कहते हैं अगर पीरियड वाली लड़कियों को खूब गले लगाओ तो पीरियड आ जाते हैं।
मैंने तो आज प्रिया को खूब गले लगाया।
मुझे लगता है कल सुबह ही आ जाएँगे। पेट में कुछ अजीब-सा लग भी रहा है।
मैं सुबह उठूँ और बेडशीट पर एक बड़ा-सा, गुलाबी-सा स्टेन मिले। फिर मैं भी लड़कियों के बीच-बीच बैठ खुसफुस करूँगी।
काश, ऐसा हो जाए!

हामिद के नाम एक खत

शशि सबलोक

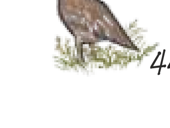
चित्रः तापोशी घोषाल

यार हामिद,

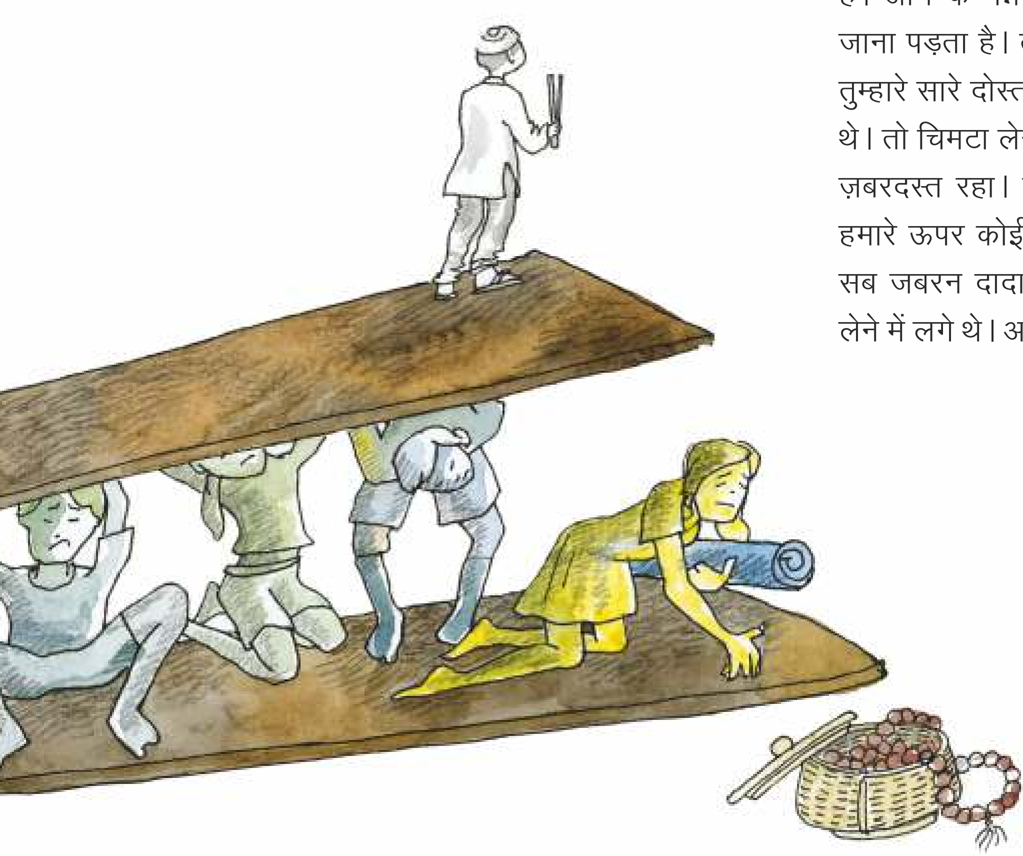
तुम अच्छे तो बहुत हो। मुझे क्या मेरी दादी की दादी को भी पता है। मेरे दोस्तों के दादा-दादियाँ नाना-नानियाँ भी जानती हैं। पर दोस्त तुम्हारे अच्छेपन से हम बड़ा टॉर्चर हुए हैं। तुमने तो अच्छा किया था जो अपनी दादी के लिए चिमटा ले आए। पर इससे हमारे मम्मी-पापा-टीचर सभी की उम्मीदें हमसे बढ़ गई हैं। मेले तो हम कम ही जाते हैं, पर हमारे घरवाले हर बार एक दबी इच्छा के साथ स्लो मोशन में हमें जेब-खर्च देते हैं। कि हमारा बेटा भी हमारे लिए चिमटे जैसा कुछ लाएगा। और ठीक बताएँ हामिद भाई, वो सिर्फ अपेक्षाएँ पाले हैं। इनसे पूछो इनको ऐसा क्या मिलता जो इनको चिमटा मिलने-सी खुशी देता, तो चुप हो जाएँगे। ज़रूरत से ज़्यादा भर रखा है घर में। ऊपर से आए दिन अमेज़न, फ्लिपकार्ट वगैरह से ऑनलाइन खरीददारी चलती रहती है। एक के साथ एक फ्री हो तो टूट ही पड़ते हैं। हमारे लिए भी अलाय बलाय ले आते हैं। पूरा बचपन बीत गया कभी साइज़ की शर्ट नहीं दिलाई। आगे तक काम आएगी के चक्कर में हमेशा ओवरसाइज़ कपड़े पहने। और जब तक उस साइज़ में हम फिट हो पाते, कपड़े की चमक जाती रहती।

खैर, बात चिमटे से शुरू हुई थी और मैं अपना रोना लेकर बैठ गया। यह दर्द मेरा नहीं कई-कई पीढ़ियों का है। तुम्हारी कहानी पचास साल से तो टेक्स्ट बुक में चल ही रही होगी। बाकी किताबें हम न पढ़ें तो चल जाएगा। पर टेक्स्टबुक से छुटकारा नहीं। मैं तो यह भी सोचता हूँ पापा-मम्मी ने भी यह कहानी पढ़ी होगी। वो कौन अपने मम्मी-पापा के लिए चिमटे जैसा गिफ्ट ले गए। पर क्या है कि अपेक्षा रखना तो दुनिया का सबसे आसान काम है। जितनी चाहो, जैसी चाहो, जिससे चाहो कर लो। दूसरों को ही तो





पूरी करनी है। आप कौन खुद को उसमें इंवेस्ट कर रहे हैं। और हामिद भाई तुम्हारी दादी ने तो चिमटे की उम्मीद नहीं रखी थी। वो तो चाहती थीं कि तुम दूध जलेबी खाते, खिलौने लाते। पर वो तो तुम थे इतने सेंसिटिव कि तुमको उनका हाथ जलना याद रहा। यार, हमने चिमटा नहीं लिया फिर भी अच्छे तो हम भी हैं। हमको भी अपने दोस्तों की फीलिंग्स का ख्याल रहता है। मम्मी पापा की भी। दादी की भी। मुझे तो लगता है मम्मी-पापा से ज़्यादा मैं ही दादी का ख्याल रखता हूँ। उनके पास बैठता हूँ। बातें करता हूँ।



पर पता है प्रेशर में न कुछ भी ठीक नहीं होता। एक दिन दोस्तों के साथ मॉल गया था। सोचा दादी के लिए कुछ ले चलता हूँ। कुछ सूझा नहीं। तो योगा मैट ले आया। पर दादी को बिलकुल नहीं सुहाया। बोलीं, "हमसे इस रबर पर कसरत न हो पाएगी, बाबू। हमारी दरी में क्या खराबी थी जो ये ले आए।" पर फिर थोड़ी देर बाद थैंक्यू बोल दीं। उम्र हो गई है। तुम्हारी कहानी देर से याद आई होगी!

हाँ, तो मॉल वाली बात पूरी नहीं हुई थी। मेरे दोस्त भी प्रेशर में थे। टेक्स्टबुक तो सभी की एक होती है न। और तुम्हारी कहानी तो एकदम शुरुएई में है। आगे के पन्नों पर तुम्हारी कहानी से होकर ही जाना पड़ता है। तुम्हारे साथ एड्वानटेज यह था कि तुम्हारे सारे दोस्त खिलौने, मिठाइयाँ लेने में लग गए थे। तो चिमटा लेने वाले तुम्हारे डिसीज़न का इम्पैक्ट ज़बरदस्त रहा। बढ़िया कॉन्ट्रास्ट हो गया था। पर हमारे ऊपर कोई कहानी लिखे तो क्या हो। सब के सब जबरन दादा-दादी के बारे में सोचते हुए गिफ्ट लेने में लगे थे। अबनॉर्मल है यह।



दोस्त, क्या है कि कहानी में समय नहीं बदलता। उम्र नहीं बदलती। तुम कहानी में आज भी वही हो जो तब थे। पर हम बदले हुए समय में उसे पढ़ रहे हैं। हम तुम्हारे इमोशन समझ रहे हैं, यही बहुत है। तुमने क्या एक्ट किया हम उसको फॉलो नहीं कर सकते। तुम जिस मेले में गए थे वो हमारे आसपास है ही नहीं। पर पढ़कर तुम्हारे साथ वहाँ घूमने का मन बहुत किया। हामिद, मैं तुम्हारे साथ होता तो चिमटा लेने के बाद तुम्हें एक चॉकलेट ज़रूर देता।

कहानी से कभी निकलो तो मिलना ज़रूर यार। कई और बातें हैं जो कहना रह गई हैं...

ठीक बा...

फॉर्म IV

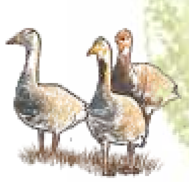
1.	प्रकाशक का स्थान	तक्षशिला एजुकेशनल सोसाइटी, नई दिल्ली
2.	प्रकाशन की नियत अवधि	द्विमासिक
3.	मुद्रक का नाम	संजीव कुमार
	राष्ट्रीयता	भारतीय
	पता	सी–484, तीसरी मंजिल, डिफेन्स कॉलोनी, नई दिल्ली 110024
4.	प्रकाशक का नाम	संजीव कुमार
	राष्ट्रीयता	भारतीय
	पता	सी–484, तीसरी मंजिल, डिफेन्स कॉलोनी, नई दिल्ली 110024
5.	सम्पादक का नाम	सुशील शुक्ल
	राष्ट्रीयता	भारतीय
	पता	2, मालवीय नगर, भोपाल 462003

6. उन व्यक्तियों के - जो समाचारपत्र / पत्रिका के स्वामी हैं और उन भागीदारों या शेयरधारकों के जो कुल पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक अंश के धारक हैं - नाम और पते

स्वामी	तक्षशिला एजुकेशनल सोसाइटी
पता	सी–404 बेसमेंट, डिफेन्स कॉलोनी, नई दिल्ली 110024

मैं संजीव कुमार घोषणा करता हूँ कि ऊपर दी गई प्रविष्टियाँ मेरे सर्वोत्तम ज्ञान और विश्वास के अनुसार सही हैं।

संजीव कुमार
प्रकाशक के हस्ताक्षर



तारीख : 1 जनवरी, 2023



किताब

प्रभात

चित्रः जिगीशा पसरीचा



पीली चिड़िया छत की मुँडेर पर नीम की छाया में बैठकर किताब पढ़ा करती थी। पीला चिड़ा अपनी छत पर कपड़े सुखाया करता था। वह पीली चिड़िया को देखता और सोचता, कितना पढ़ती है यह। इसी तरह पढ़ती रही तो एक दिन क्या से क्या बन जाएगी!

पीली चिड़िया सोचती, कितने कपड़े सुखाता है यह। किताब तो कभी इसके हाथ में देखी नहीं।

एक दिन पीले चिड़े को वह घर खाली कर जाना पड़ा। क्योंकि कौन-सा उसका वह अपना घर था। बल्कि उसे तो शहर से भी जाना पड़ा। क्योंकि कौन-सा वह उसका अपना शहर था।

पीली चिड़िया कई दिन तक वहीं आकर किताब पढ़ती रही। उसकी वह किताब जो इतने दिनों में पूरी नहीं हो पा रही थी, अब पूरी हो गई थी।

फिर कभी वह छत की मुँडेर पर नीम की छाया में बैठकर पढ़ने नहीं आई।

अवली

हिरण्या
चित्रः तापोशी घोषाल

वह पिता को नहीं जानती थी। पिता के होने को नहीं जानती थी। ना होने को भी नहीं जानती थी। किसी के नहीं होने को जानने के लिए उसके होने को जानना ज़रूरी है। इस मामले में तीन स्थितियाँ हो सकती हैं- होना, नहीं होना और शून्य। यह लड़की पिता की जगह शून्य को जानती थी। शायद।

पिता कोई कहानी थे। वह उस कहानी को कहना नहीं जानती थी। बहुत बाद में उसे पता चला कि कुछ कहानियाँ अलग तरह से बताई जाती हैं। उन्हें बताने के साथ ही उन्हें नहीं बताना है, भी बता दिया जाता है। कहानियाँ कही-सुनाई जाती हैं। मगर इंसान को अपनी कहानियाँ कहना-सुनाना नहीं सिखाया जाता है। जैसे, कहानियों को नहीं कहना सिखा दिया जाता है।

यह कहानी पिता को नहीं जानने वाली बच्ची की है। अपनी कहानी कहने की कोशिश और साहस की भी है।

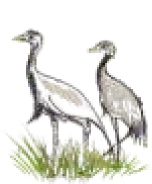
उसका नाम अवली था। नाम तो उसका बहुत बड़ा रखा गया था। उसी ने इसे छोटा कर लिया था। छोटेपन से उसे लगाव था। बड़ी चीज़ें उसे भारी लगने लगती थीं। जैसे कि नाम भारी लगने लगा था। अवली को मैं कभी समझ नहीं पाई। वह कहती थी कि वह तो खुद को भी नहीं समझ पाई है। सब कुछ समझना ज़रूरी भी नहीं होता है। कई बार तो वह खतरनाक भी हो सकता है।

अवली व्हीलचेयर का इस्तेमाल करती थी। हालाँकि इसका उससे कोई खास लेना-देना नहीं था। यह कहानी उसी ने मुझे बताई है। कहते हैं कि अवली कुछ नहीं भूलती है।

अवली अपनी माँ से बहुत हिली रही। पहले उसका परिवार दो कमरों के एक घर में रहता था। फिर तीन कमरों के घर में। उस घर में माँ का कमरा ही उसका और उसकी बहिन का कमरा था। दूसरे कमरे में गैरमौजूद पिता अपनी किताबों के समुद्र में डूबे बैठे होते। वह उनके पास जाने से हिचकिचाती। उनका कमरा यूँ भी हमेशा बन्द रहता। माँ भी उनके बराबर पढ़ी-लिखी थीं। पर उन्हें कभी दरवाज़ा बन्द किए नहीं देखा। वह पिता के दरवाज़े के सामने आदर से खड़ी होतीं। जैसे, उस कमरे में इतिहास रचा जा रहा हो। अवली को लगता कि एक दिन उनकी सब चीज़ें म्यूज़ियम को दे दी जाएँगी। लोग उन्हें देखने आएँगे। अवली कभी उस कमरे की तरफ जाती भी तो माँ कह देती कि वहाँ मत जाओ, पिता काम कर रहे हैं।

वह पिताजी को 'पिताजी' नहीं कहती थी। लेकिन धीरे-धीरे कहने लगी। माँ कभी 'माँजी' नहीं होती। पिता हो ही जाते हैं।

पिता हमेशा काम करते रहे। यह पता न लगा कि क्या काम कर रहे हैं। जब वह छोटी थी तो काफी समय अपने ननिहाल में रही। उसकी नानी जब पूजा करतीं तो वह उनके पास ही बैठती थी। उन्हें जयकारे लगाते हुए सुनती। उसने एक-दो बार पूछा, "अगर दुर्गा माँ हैं तो कोई देवता पिता क्यों नहीं हैं?" ऐसे सवालों के जवाब कहाँ होते हैं।





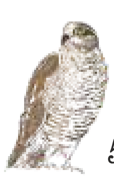
भूले-भटके से उसे कभी-कभी पिता के दर्शन हो जाते। उसे लगता जैसे उसके चारों ओर उनकी नज़र है। वह उनकी नज़रों से घिरी हुई है। छोटी-छोटी सी बातें भी उनके लिए बहुत बड़ी थीं। मसलन, उन्हें अवली का कार्टून देखना पसन्द नहीं था। माँ उसके साथ देख लेती थी। वह उसे कार्टून देखते हुए पाते तो कहते, "हाँ, हाँ इसी में लगे रहो। खूब देखो मिकी माउस। यही सब करते रह जाओगी। कुछ नहीं हो पाएगा तुमसे।"

अवली "बस वो, बस वो..." करती रह जाती। माँ सफाई देने में लगी रहतीं। उन्हें मिथक कथाएँ सख्त नापसन्द थीं। अवली को याद नहीं कि वे कभी उसके पास भी बैठे हों। हालाँकि पास बैठना, साथ बैठना नहीं होता।

उसकी डिसेबिलिटी उसके फाइन मोटर स्किल्स को प्रभावित करती थी। उसकी लिखावट भी आसानी से नहीं समझी जा सकती थी। जिस समय की हम बात कर रहे हैं उस समय वह चार-पाँच साल की रही होगी। खाते-खाते उससे खाना गिर जाया करता। आगे चलकर भी ऐसा उसके साथ हो जाता था। उस समय खाना गिराने को लेकर जिस तरह का बर्ताव वे करते थे, उसे लगता कि वह असफल रही। उसे देर तक सोने की आदत थी। इस बात को लेकर पता नहीं उसने कब तक, और कितना और क्या-क्या नहीं सुना था। उसकी छोटी बहन रात भर खेलती थी। माँ और अवली सो नहीं पाते थे। छोटी बहन छोटी थी। पिता उसके खेल से बचने के लिए 'स्टडी रूम' में सोते थे। वैसे भी इतने छोटे बच्चे के देर तक सोने की सफाई देने की ज़रूरत नहीं पड़नी चाहिए।

उसके साथ खेलने के लिए कोई नहीं था। एक बार 'पिता' शतरंज उठा लाए। बच्ची को प्लास्टर





लगा था, इसलिए। उसे पकड़ा कर कहा, "डिब्बे के पीछे खेलने का तरीका लिखा है।" पाँच साल की बच्ची डिब्बे के पीछे लिखा तरीका पढ़कर शतरंज कैसे खेल सकती थी, यह उन्हें समझ नहीं आया। वे तो इतिहासकार थे, शतरंज का भी इतिहास उन्हें पता होना चाहिए था। यह भी पता होना चाहिए था कि उसे खेलने के लिए कम से कम दो लोगों की ज़रूरत पड़ती है। माँ ने कहा कि उन्हें शतरंज खेलना नहीं आता। शतरंज नहीं खेलने के कारण उसे बहुत डाँट पड़ती। व्यंग्य में। वह उन गोटियों के साथ कल्पनाओं में खो जाती। यही उसका शतरंज था।

ऐसी कई चीज़ें थीं जो पिता अवली से करने को कहते थे और वे खुद उन्हें करना नहीं जानते थे। मसलन, संगीत, शतरंज, खूब सारी भाषाएँ, केवल ज्ञानवर्धक चीज़ें देखना और चुप रहना।

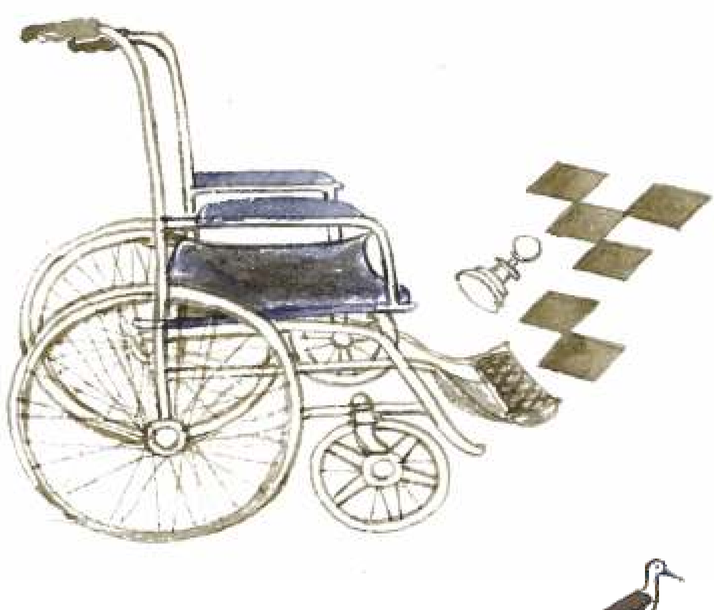
अवली की शुरुआती पढ़ाई घर पर ही हुई। देश के ज़्यादातर स्कूलों में उसके लिए कोई जगह नहीं थी। माँ उसे पढ़ाती। आगे चलकर स्कूल में भी उसका दाखिला हुआ। पहले अवली अँग्रेज़ी न जानने के कारण सुनती फिर अच्छी अँग्रेज़ी न आने के कारण। छोटी-सी उमर में उसके ऊपर इनसाइक्लोपीडिया लाद दिए गए। पिता जयशंकर प्रसाद की कविताएँ सुनाते और मतलब पूछते। फिर कहते कि समझ आया... नहीं समझीं न? कुछ नहीं हो सकता तुम्हारा।

एक बार पिता को उसे अँग्रेज़ी पढ़ाने की धुन सवार हुई। एक ही दिन में अवली बहुत सहम गई। उस दिन के बाद उन्होंने फिर कभी पढ़ाया भी नहीं।

कई बार घर के कमरे से आवाज़ आती। कमरा बन्द होता। कमरे के भीतर माँ के रोने की आवाज़ आती। चीखने-चिल्लाने की। अवली और उसकी बहिन हैरान-परेशान बैठे रहते। अवली को माँ अच्छी लगती थीं। बहुत प्यारी थीं लेकिन हमेशा उसके पीछे पड़ी रहती थीं। वे डाँटती तो ज़ोर-से डाँटतीं। कई बार कमरे से बाहर आई माँ का चेहरा सूजा होता। उन्हें चोटें लगी होतीं।

धीरे-धीरे दरवाज़ा बन्द होना बन्द हो गया। सब कुछ अवली और उसकी बहिन के सामने होने लगा। और फिर ऐसे ही एक वाकए के बाद पिता चले गए। अवली उस वक्त नौ साल की थी। उसके बाद पिता कई बार आए। गए। मगर जब गए तो कुछ ऐसा ही करके गए।

वे हमेशा चाहते थे कि अवली चुप रहे। मगर अवली चुप ही तो नहीं रह सकती थी। इसके बाद बहुत कुछ बदला। अवली और उसका परिवार आगे बढ़ा। पिता एक रहस्य बन गए। एक कहानी बन गए। एक अजब कहानी।







गोल मारनेवाला बड़ा या उसे रोकने वाला

सोपान जोशी

चित्रः एलन शॉ



वह सब कुछ जानता है। दिन-रात केवल पढ़ता ही रहता है। हमने बहुत ढूँढा, पर पता न चला कि उसका असली नाम क्या है! बस, इतना जानते हैं कि उसके दोस्त उसे बुलाते हैं...आलू-कचालू!

पढ़ने-लिखने के नाम से उसे चक्कर आते हैं। दिन-रात खेलता रहता है। चाहे जो खिला लो। बोलना-चालना बहुत ही कम। हाँ, कहानी सुनना उसे खूब भाता है। अगर बोलता भी है, तो बस पूछने के लिए, 'खेलने चलेगा?' इसीलिए उसका नाम पड़ गया... खेलतुतमिश।





फुटबॉल का विश्व कप सिर पर था। खेलतुतमिश और तुर्रमखाँ टहलते हुए जा रहे थे। इस पर बहस हो रही थी कि विश्व कप कौन-सा देश जीतेगा, कौन-सा खिलाड़ी सबसे ज़्यादा गोल ठोंकेगा। उनकी आवाज़ ज़ोर-ज़ोर से आ रही थी। दोनों की नज़र आलू-कचालू पर लगी। वह पेड़ के तने के सहारे टिक कर बैठा था। टाँगें पसरी हुई थीं। वह एक पत्रिका पढ़ रहा था।

खेलतुतमिश ने तुर्रमखाँ से कहा कि वे आलू से पूछते हैं। तुर्रमखाँ को जल्दी घर पहुँचना था। माँ की डाँट का डर था। वह तुरन्त निकल गया और खेलतुतमिश आलू के पास आ बैठा।

खेलः फुटबॉल विश्व कप कौन जीतेगा?

आलूः तू जिसे जिताए वही!

खेलः मज़ाक मत कर। बता ना, तुझे क्या लगता है?

आलूः अरे! यह क्या बात हुई? मैं जिसका नाम लूँगा वही विश्व कप जीत जाएगा!

खेलः तू इतना कुछ जानता है, पढ़ता रहता है। एक्सपर्ट लोग क्या कह रहे हैं?

आलूः अगर हार-जीत किसी के कहने से तय हो जाती तो खेलने की ज़रूरत ही नहीं होती! विशेषज्ञ वोट डाल के विजेता तय कर लेते! खेल-कूद का मज़ा तो तभी है जब नतीजा कोई न जानता हो। जब हार-जीत का फैसला मैदान पर हो। अखबार के पन्नों पर या टी.वी. और मोबाइल की स्क्रीन पर नहीं।

खेलः क्या खेल-कूद की बात करने वाले बेवकूफ हैं?

आलूः यह तो नहीं कहा मैंने!

खेलः फिर क्या कहा?

आलूः यही कि खेलने में और उसकी बात करने में बड़ा फर्क होता है।

खेलः तू कौन-सा अन्तर्राष्ट्रीय खिलाड़ी है?

आलूः मैं तो अपने मोहल्ले में भी नहीं खेल पाता। पर मुझे खेल-कूद देखने में बड़ा सुख लगता है। उस पर पढ़ने में भी।

खेलः तभी तो मैं तुझसे पूछ रहा था।

आलूः पर तेरा सवाल बेकार था। कौन जीतेगा यह तो कोई नहीं बता सकता। फुटबॉल में ही कितनी बढ़िया टीमें बिना कुछ जीते गुमनामी में खो गईं। और कितने ही लोग केवल इसलिए याद किए जाते हैं क्योंकि वे जीत गए थे। खिलाड़ी चाहे जितना अच्छा हो, नतीजा बहुत सारी चीज़ों से तय होता है। खासकर फुटबॉल जैसे खेल में, जिसे ग्यारह लोगों की टीम खेलती है। फिर कई खिलाड़ी तो बेंच पर ही बैठे रह जाते हैं। कोच का बड़ा महत्व होता है। खेल प्रशासकों का भी असर पड़ता है।

खेलः हाँ, पर खेलते तो खिलाड़ी हैं! जिस शॉट से गोल होता है उसे कोई प्रशिक्षक नहीं मारता!

आलूः यह बात सही है। लेकिन कौन-सी टीम जीतेगी यह केवल गोल करने वाले से तय नहीं होता।

खेलः फिर किससे तय होता है? गोल करने वाले ही तो टीम को जिताते हैं!

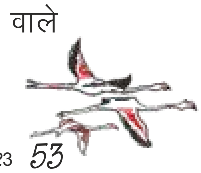
आलूः अगर तू तीन गोल दाग दे और सामने वाले चार, तो कौन जीतेगा?

खेलः जो टीम ज़्यादा गोल करती है!

आलूः या फिर वह टीम जिसके खिलाफ कम गोल होते हैं? जिसकी रक्षा पंक्ति सामने वालों को गोल करने से रोक सकती है?

खेलः दोनों की ज़रूरत होती है।

आलूः सो तो है। पर बात किसकी होती है? तेरे पसन्दीदा खिलाड़ी कौन हैं? गोल करने वाले



आक्रामक फॉरवर्ड, या गोल रोकने वाले रक्षात्मक डिफेंडर?

खेलः गोल करने वाले! क्योंकि वे खेल बनाते हैं। डिफेंडर तो खेल बिगाड़ते हैं।

आलूः ऐसी कोई भी टीम नहीं है जिसने बढ़िया डिफेंडर और गोलकीपर के बिना विश्व कप जीता हो, या कोई भी दूसरी बड़ी प्रतियोगिता! पर ऐसी टीमें जीत चुकी हैं जिनके पास बहुत अच्छे फॉरवर्ड नहीं थे।

खेलः ऐसा होता होगा! पर याद तो गोल ही किए जाते हैं। लोग पूछते हैं कि गोल किसने किया। विश्व कप का बेहतरीन गोल तो 1986 में इंग्लैंड के खिलाफ डिएगो मैराडोना का ही है।

आलूः जो लोग सही में खेल का मज़ा लेते हैं, उसकी बारीकियाँ जानते हैं, वे ऐसे नादान नहीं होते। वे बढ़िया रक्षात्मक खिलाड़ियों को भी ध्यान से देखते हैं। उन्हें पता रहता है कि खेल का असली मज़ा आक्रमण और सुरक्षा के बीच में होता है। तुझे बढ़िया डिफेंडर याद हैं क्या? तू विश्व कप के ऐसे यादगार रक्षात्मक पल बता सकता है जिनकी तुलना किसी बढ़िया गोल से की गई हो।

खेलः नहीं। यह सब तो तू ही पढ़ता है। तू ही बता।

आलूः तो फिर 1970 के विश्व कप का एक वाकया बताता हूँ। उस समय विश्व विजेता इंग्लैंड की टीम थी, जिसने 1966 की प्रतियोगिता जीती थी। ग्रुप के मुकाबले में उसका सामना हुआ ब्राज़ील से, जिसमें दुनिया का सर्वश्रेष्ठ फॉरवर्ड था। उसका नाम तो तू जानता ही होगा।

खेलः पेले?

आलूः हाँ। उस ब्राज़ील की टीम को बहुत-से लोग आज तक की सबसे उम्दा टीमों में गिनते हैं। उसमें कई महारथी थे। और वह मैच ब्राज़ील ने एक गोल दाग कर जीता था। पर उस मैच को किसी दूसरी वजह से याद किया जाता है।

खेलः किस कारण?

आलूः इंग्लैंड के गोलकीपर गॉरडन बैंक्स के एक बेहतरीन रक्षात्मक पल के लिए। मैच के पहले हिस्से में स्कोर 0-0 था। ब्राज़ील के दाहिनी तरफ के फॉरवर्ड जाएरज़ीन्यो नामक खिलाड़ी थे, जिन्हें उस समय दुनिया का सबसे अच्छा ड्रिबलर माना जाता था। गेंद के साथ दौड़ते हुए डिफेंडर को चकमा देने में उनका जवाब न था। उस मैच में उन्होंने एक डिफेंडर को छका के इंग्लैंड के बक्से के दाहिने छोर से एक सधा हुआ पास हवा में पेले की ओर खेला। पेले केवल अपनी टाँगों से ही नहीं अपने सिर से भी कमाल करते थे। वे ऊँचा उछले और एक ज़ोरदार हेडर जड़ दिया। देखने वाला था वह हेडर, कपाल के ऐन सामने से नीचे की तरफ मारा हुआ। एकदम वैसा जैसा प्रशिक्षक अपने चेलों को सिखाते हैं, और जैसा किसी गोलकीपर को अच्छा न लगे। क्योंकि जब ताकतवर हेडर नीचे जा के उछलता है, तब उसकी ऊँचाई का अन्दाज़ा नहीं लगता।

खेलः गोलकीपर कहाँ था?

आलूः क्योंकि पास दाहिनी ओर से आया था इसलिए गॉरडन बैंक्स का ध्यान उस तरफ था। लेकिन गेंद दूसरी तरफ चली गई थी। जब पेले ने हेडर ठोंका तब बैंक्स पलट ही रहे थे। गेंद गोल के भीतर जा ही चुकी थी, क्योंकि पेले खुशी से दहाड़ उठे थे, अपने गोल की खुशी में।

खेलः गोल नहीं हुआ?

आलूः गॉरडन बैंक्स ने बिजली की फुर्ती से




CEMENTO TOLTE
FIFA



अपनी दिशा बदली और गेंद की तरफ हवा में कूद गए। जब तक उनका हाथ पहुँचता, तब तक गेंद उनके पीछे जा चुकी थी। पर उन्होंने अपनी पीठ गज़ब मोड़ी और अपने दाहिने हाथ के अँगूठे के छोर से गेंद को ठेल दिया। गेंद ऊपर उछली और गोल के किनारे से होती हुई पीछे चली गई। पेले भौंचक्के रह गए। जब बैंक्स खड़े हुए तब उन्होंने उनसे कहा कि वह गोल तो हो चुका था! बैंक्स ने कहा कि उन्हें भी यही लगा कि गोल हो गया! किसी को विश्वास नहीं हो रहा था कि गेंद गोल के भीतर नहीं गई!

खेलः पर जीत तो ब्राज़ील की ही हुई कि नहीं?

आलूः हुई। पर पेले ने यह खुद कहा है कि लोग उन्हें तीसरा विश्व कप जीतने के लिए उतना याद नहीं करते जितना कि गॉरडन बैंक्स के उस कमाल के बचाव के कारण गोल न कर पाने के लिए। वे कहते हैं कि गोल तो उन्होंने कर दिया था, पर बैंक्स ने उसे चुरा लिया। पर क्या तू सोच सकता है कि इंग्लैंड के कप्तान बॉबी मोर ने इस बचाव के बाद बैंक्स से क्या कहा?

खेलः शाबाशी दी होगी!

आलूः नहीं। उन्होंने बैंक्स की चुटकी ली और कहा, तुम बुढ़ा गए हो क्योंकि पहले तुम ऐसी गेंदों को पकड़ लेते थे!

खेलः बैंक्स ने क्या कहा?

आलूः उस समय तो कुछ नहीं। पर बाद में कहा कि उन्होंने ऐसे करतबी बचाव कई बार किए। किन्तु याद वही किया जाता है जो विश्व कप में था, और जिसे टी.वी. पर दुनिया भर में देखा गया।

खेलः हाँ, विश्व कप की बात ही अलग है।

आलूः इसी मैच में जब इंग्लैंड एक गोल से पीछे था, तब एक और कमाल बचाव हुआ। वह गोलकीपर का नहीं, डिफेंडर का था। स्कोर बराबर करने के लिए इंग्लैंड के खिलाड़ी आक्रामक ज़ोर लगा रहे थे। तब गेंद जाएरज़ीन्यो के पास आ गई और वे तेज़ी से इंग्लैंड के गोल की ओर दौड़ने लगे। पीछे कोई और नहीं था। कप्तान बॉबी मोर जाएरज़ीन्यो के साथ-साथ दौड़ते गए और जैसे ही वे बॉक्स के भीतर घुसे, ठीक मौका ताड़ के मोर ने उनकी टाँग से गेंद ठेल के निकाल दी। ज़रा-सी जल्दी होती तो जाएरज़ीन्यो उन्हें छका देते! ज़रा-सी देर होती तो रेफरी पेनाल्टी दे देते! यही नहीं, इस बचाव के बाद बॉबी मोर ने गेंद आगे इस खूबसूरती से खेली कि दूसरी तरफ इंग्लैंड को गोल करने का मौका मिल गया। किन्तु इंग्लैंड के खिलाड़ी चूक गए। मैच हार गए।

खेलः स्कोर में ऐसी बातें कहाँ पता चलती हैं।

आलूः यही तो! जब मैच खत्म हुआ तब पेले ने सराहना के भाव से बॉबी मोर को गले लगाया। उनके साथ जर्सी बदली! क्योंकि अनेक मौके मिलने पर भी बॉबी मोर और गॉरडन बैंक्स ने दुनिया के सर्वश्रेष्ठ खिलाड़ी को गोल करने नहीं दिया!

खेलः चल, मैं चलता हूँ। इस विश्व कप में रक्षात्मक खिलाड़ियों को भी ध्यान से देखूँगा!





माथापच्ची

1 एक घोंघे को एक से दूसरी जगह जाने में डेढ़ घण्टा लगता है। लेकिन इसी रास्ते पर वापस आने में सिर्फ 90 मिनट लगते हैं। क्यों?

2 एक जगह एक बिल्ली और 25 पालतू चूहे 40 रुपए में मिल रहे थे। राहुल ने दो बिल्लियाँ और 10 पालतू चूहे 40 रुपए में लिए। एक बिल्ली की कीमत क्या रही होगी?

3 एक बार वज़न तौलने की मशीन पर नीतू अपने पिल्ले के साथ खड़ी हो गई। दोनों का कुल वज़न 41 किलो आया। नीतू का वज़न उसके पिल्ले से 27 किलो ज़्यादा है। पिल्ले का वज़न कितना होगा?

4 हुमा के पापा ने बताया कि नदी तक जाने के दो रास्ते हैं। एक रास्ता दूसरे से 400 मीटर लम्बा है। एक दिन मैं छोटे रास्ते से नदी पर छह किलोमीटर प्रति घण्टा की रफ्तार से गया। वापस लम्बे रास्ते से आया लेकिन आठ किलोमीटर प्रति घण्टे की रफ्तार से। लौटते हुए मुझे तीन मिनट कम समय लगा। ये दोनों रास्ते कितने लम्बे हैं?

5 एक न रुक सकने वाला तोप का गोला एक अमिट दीवार से टकराएगा तो क्या होगा?
(संकेतः शिखा प्रीति से लम्बी है और प्रीति शिखा से। इसे तुम कैसे समझाओगे?)

6 एक कुत्ता मिला। वो रमन, आयशा या पूर्वा में से किसी एक का है। इनका कहना है:
रमनः यह कुत्ता आयशा का नहीं है।
आयशाः हाँ, यह सच है।
पूर्वाः यह कुत्ता रमन का नहीं है।
जिसका कुत्ता है वह सच बोल रहा है। इनमें से कोई एक झूठ है। कुत्ता है किसका?

7 एक बार एक राजा के सभी 59 कुत्ते भाग गए। लोगों ने उन्हें पहचान लिया और घोड़ा-गाड़ियों में भरकर वापस पहुँचाया। एक बड़ी गाड़ी में नौ कुत्ते आए। एक छोटी गाड़ी में चार। कुत्तों को वापस पहुँचाने में कितनी बड़ी और छोटी गाड़ियाँ लगी होंगी?

8 एक बिल्डिंग में 100 घर हैं। साइन मेकर को इनके नम्बर लिखने हैं। उसे कितने 9 अंक मँगवाने होंगे?

2. 15, 3. 7 किलो 6. रमन, 7. 3 बड़ी, 8 छोटी, 8. 20

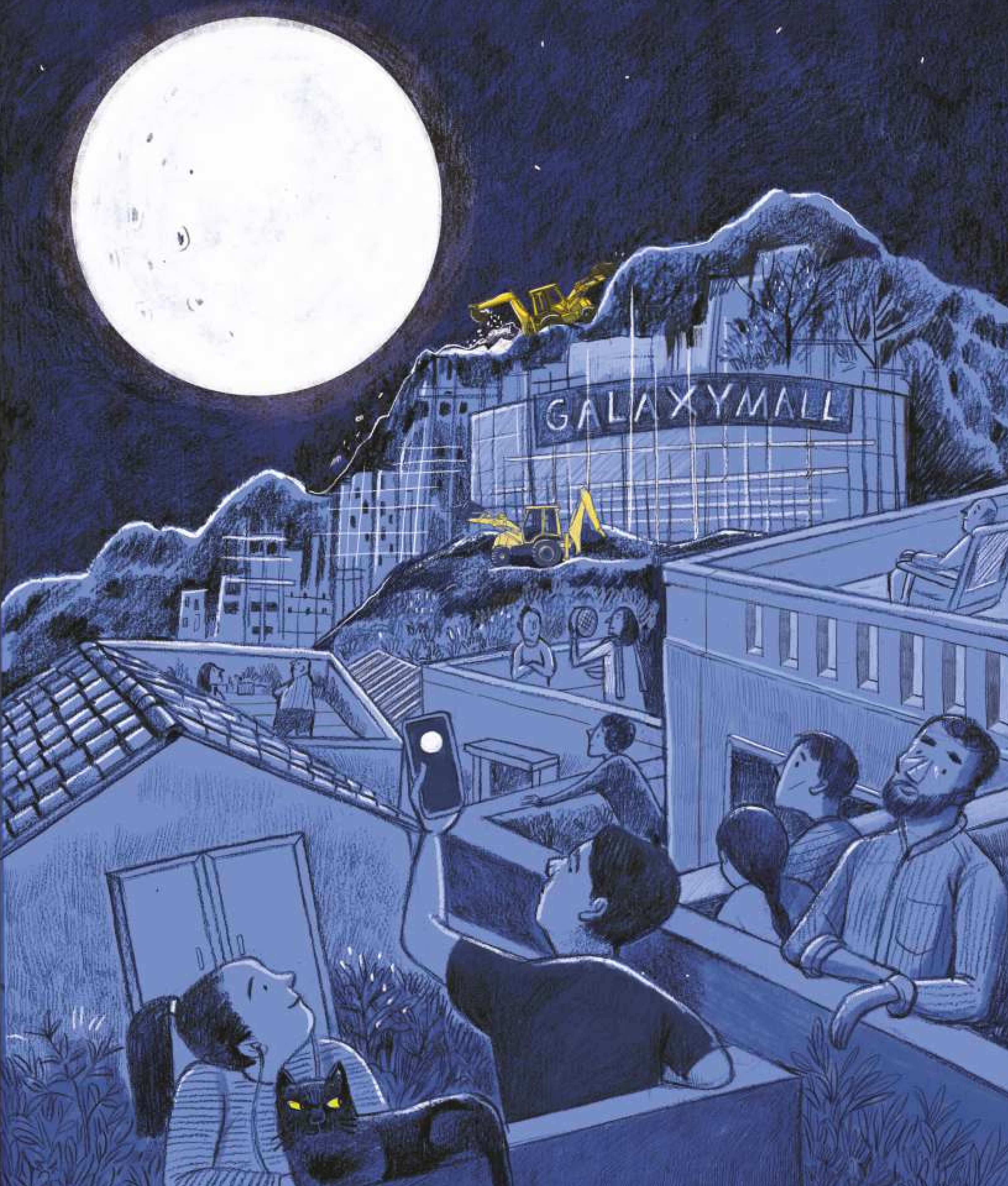
चाँद पर यकीन करते लोग

जसिन्ता केरकेट्टा
चित्रः प्रिया कुरियन

*दुनिया भर के लोग
जो एक दूसरे को ठीक से नहीं जानते
अपनी अपनी छत से एक दिन
एक साथ चाँद को देखते हैं
और इस चाँद पर यकीन करते हैं*

*पर यकीन नहीं कर पाते उस पर
जो दिन-रात उनके ही आसपास रहता है
और छत पर आकर आवाज़ देने भर से
जो दौड़ कर बाहर आ सकता है*

*इस धरती पर लोग
चाँद पर भरोसा करते हैं
जो किसी के लिए भी कभी
ज़मीन पर नहीं उतर सकता है
पर उस पर भरोसा नहीं कर पाते
जो पीढ़ियों से पड़ोस में रहता है*


GALAXYMALL



मेरे भैया जादूगर हैं...

तरनबीर सहानी
चित्रः एलन शॉ

मेरे भैया जादूगर हैं। थोड़े अलग तरह के हैं। पर हैं एकदम बेस्टवाले।

वो शब्दों से जादूगरी करते हैं।

पर कभी-कभी तो बस उनकी हँसी ही सब पर जादू कर देती है।

उनकी एक फेमस ट्रिक है। वे अपने कान बढ़ाते जाते हैं। और उसमें सबकी बातों के लिए जगह बनती जाती है। बातें जो कही नहीं गई हैं वो उनको भी सुन लेते हैं। कभी उलटे को सीधे और पूरब को पश्चिम से जोड़कर अजीबो-गरीब चमत्कार करते हैं।

अब केक के साथ नान खाता है कोई भला?

पर ऐसे अटपटे जादूगर का शायद यही पसन्दीदा खाना हो। तभी तो कहता हूँ, थोड़े से अलग हैं पर मेरे भैया बेस्ट हैं।



पता नहीं उन्होंने सबकी आँखों में ऐसा क्या जादू कर दिया है कि सबको वो लड़की ही दिखाई देते हैं। यह खेल लम्बे समय से चल रहा है। मेरे आने से भी पहले से। पता नहीं कब से?

शायद जबसे उन्होंने जादू सीखा है। कमाल का जादू है यह! शर्तिया, हैरी पॉटर भी ना कर पाए ऐसा जादू! भैया ने अब मुझे भी इसमें शामिल कर लिया है।

पर भैया अब थक गए हैं। और थकें भी क्यों नहीं? इतना बढ़िया जादू इतने लम्बे समय तक करते रहना बहुत दमखम का काम है। भैया इसे खतम करना चाहते हैं। पर कोई नहीं माना। कोई मानना चाहता ही नहीं था। बेस्ट जादूगर का बेस्ट जादू कोई खतम होते नहीं देखना चाहता है। पापा गुस्सा हुए, मम्मी ने रोना-धोना, डराना-धमकाना, मनाना-वनाना किया।

पर ऐसे ही थोड़ी ना मेरे भैया बेस्ट हैं। ऑडियंस को कभी निराश नहीं करते। तो फिर! मेरी तरफ देख वे मुस्कराए और अपना जादू जारी रखा। सबने अपने मन की बात कही और तालियाँ बजाईं।

आज तो और भी मज़ा आ गया।

शायद ये अब तक का बेस्ट खेल होगा। भैया गायब होने का जादू कर रहे हैं। भैया के फैन्स सफेद पोशाक पहने हुए हैं। उन्हें ढूँढ रहे हैं। पापा-मम्मी कुछ ज़्यादा ही अजीब हो गए हैं। कल का गुस्सा भैया की तरह गायब हो गया है। चाचू-चाची, मामा-मामी भी आए हैं। सब छुपनछिपाई का खेल खेल रहे हैं।

और मैं।

मैं बस इन्तज़ार कर रहा हूँ कि कब भैया मुझे धप्पा बोलें और इस जादू में मुझे भी शामिल कर लें।

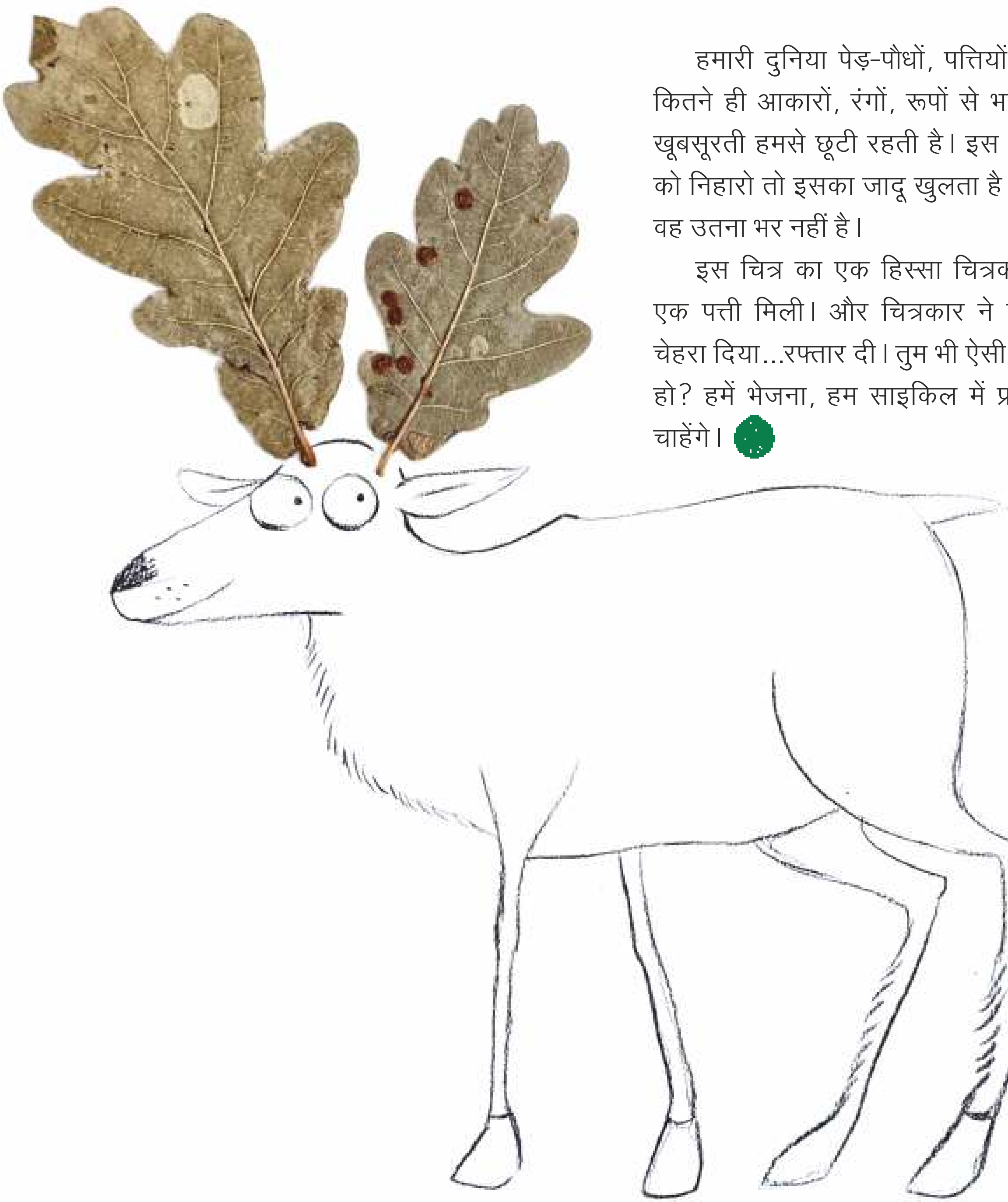


चित्रः सौम्या शुक्ला



है भी, नहीं भी!

प्रिया कुरियन



हमारी दुनिया पेड़-पौधों, पत्तियों, फूलों, बीजों, कितने ही आकारों, रंगों, रूपों से भरी हुई है। यह खूबसूरती हमसे छूटी रहती है। इस निराली दुनिया को निहारो तो इसका जादू खुलता है। जो दिखता है वह उतना भर नहीं है।

इस चित्र का एक हिस्सा चित्रकार को मिला। एक पत्ती मिली। और चित्रकार ने पाँव दिए, एक चेहरा दिया...रफ्तार दी। तुम भी ऐसी करामातें करते हो? हमें भेजना, हम साइकिल में प्रकाशित करना चाहेंगे।



सतबहनों की बोली

राघवेन्द्र गदगकर
चित्रः भार्गव कुलकर्णी
अनुवादः शशि सबलोक

शोर मचाती सात बहनें अकसर कहीं भी मिल जाती हैं। जंगलों, बगीचों, घरों के आसपास कहीं भी। ये अकेले कम दिखती हैं। अकसर छह-दस-दस साथ रहती हैं। रहती हैं या रहते हैं यह पता नहीं चलता। इसलिए कहीं इन्हें सात बहनें कहते हैं, कहीं सात भाई। भारत में कम ही जगहें होंगी जहाँ ये नहीं मिलती हैं। और जहाँ मिलती हैं वहाँ शोर मचा-मचाकर अपने होने की खबर देती रहती हैं। इतनी करीब हैं हमसे पर ताज्जुब कि इनके बारे में हमें बहुत-सी बातें एक अँग्रेज एंटोनी गैस्टन से पता चलीं। सात बहनें (जंगल बैबलर) को जानने 1970 के दशक में वे ऑक्सफोर्ड से भारत आए थे। उनके बाद इस पर आगे काम नहीं हुआ।

पिछले दिनों आयसर मोहाली की मंजरी जैन और उनकी दो शोधकर्ताओं सोनिया देवी ऐमबेन और सोनम चोरोल ने बैबलर पर ज़बरदस्त काम किया है। जानवरों की बोली (आवाज़) में मंजरी की दिलचस्पी है। तो ये शोरीली चिड़िया कैसे इनका ध्यान अपनी ओर न खींचती! उन्होंने सोचा कि इनकी तीखी चींचीं जो हमें सुनाई देती है वो उत्ती ही है या कुछ और भी कह रही है।

जवाब पाने मंजरी अपने साथियों के साथ काम में भिड़ गईं। उन्होंने मोहाली में नौ जगहें तय कीं। वहाँ कई दिनों तक सात बहनों के बहुत-से झुण्डों की हर हरकत पर नज़र रखी। घूमती चिचियाती चिड़ियों की आवाज़ों को रिकॉर्ड किया। घोंसले में बैठी और जाल में फँसी चिड़ियों और उनके बच्चों की चींचीं भी रिकॉर्ड की। इनकी टाँगों पर रंगीन छल्ले पहनाए ताकि हरेक की पहचान की जा सके।

वो क्या कह-सुन रही थीं?

चिचिया कर बैबलर जो कह रही है उसे सामनेवाली चिड़िया समझ क्या रही है? इसे जानने के लिए काफी मशक्कत की गई। रिकॉर्ड की गई सारी आवाज़ों को बार-बार सुना गया। अलग-अलग आवाज़ों को पहचाना गया। उनको नाम दिया गया। आवाज़ जैसी सुनाई दी, वही नाम दिया गया। ध्वनियों के मुताबिक नाम दिए जाने को ओनोमैटोपोइक कहते हैं।

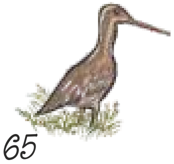
एंटोनी गैस्टन ने भी सात बहनों की आवाज़ों की सूची बनाई थी। मंजरी ने इसे आगे बढ़ाते हुए इसमें कई और नाम जोड़े। जैसे, चक, कुक, क्या-क्या-





क्या, क-क-क, खैक...। हर आवाज़ के साथ वे यह भी नोट करती रहीं कि किस स्थिति में इसे बोला गया और उसे सुनकर सामनेवाले की क्या प्रतिक्रिया रही। इस तरह पन्द्रह अलग-अलग चिचियाहटों को दर्ज किया गया। इन पन्द्रह ध्वनियों में से सात दोस्ताना और आठ गैरदोस्ताना स्थितियों में बोली गईं। मंजरी और उनकी टीम ने जो पाया उसे दो उदाहरणों से समझते हैं - सम्पर्क करने और परेशानी में की गई ध्वनियाँ।

अपने साथियों से सम्पर्क करने के लिए 'चक' की आवाज़ की गई। खासतौर पर जब कोई अपने साथियों से बिछड़ गया था। इस आवाज़ को सुनकर



कई साथी (50 प्रतिशत) वही आवाज़ करने लगे। इनमें से 41 प्रतिशत पीछे रह गए साथी को लिवाने उसके पास लौट आए। चक की आवाज़ ऊँची एकस्वरीय आवाज़ होती है।

परेशानी में की गई आवाज़ 'क्या-क्या-क्या' तीखी एकस्वरीय पुकार होती है। परेशानी में फँसी चिड़िया इसे लगातार बोलती रहती है। आमतौर पर जाल में फँसने या इंसान द्वारा पकड़े जाने पर यह आवाज़ की जाती है। शायद साथियों का ध्यान अपनी ओर लाने के लिए। टीम ने करीबन 30 प्रतिशत साथियों को इस पर प्रतिक्रिया देते देखा।

किस्म-किस्म की बोलियाँ

जंगल बैबलर की ये पन्द्रह तरह की बोलियाँ हमें एक-दूसरे से एकदम अलग सुनाई देती हैं। साथी चिड़ियाँ इनसे अलग-अलग अर्थ पाती दिखीं। पर विज्ञान में शोध किन्हीं लोगों के अनुभव के आधार पर नहीं हो सकता। किसी भी नतीजे पर पहुँचने के लिए आवाज़ों को ठोस अंकों में तब्दील करना ज़रूरी है। आवाज़ हवा के कम्पन से पैदा होती है। इसलिए सभी पन्द्रह आवाज़ों का स्पेक्ट्रोग्राम द्वारा मापन किया गया। स्वरों के बीच की दूरी के हिसाब से आवाज़ों को एकस्वरीय, बहुस्वरीय (एक बार में एक से ज़्यादा स्वर) या कोरस (एक से ज़्यादा पक्षियों का एक साथ आवाज़ें करना) कहा गया।

जंगल बैबलर के बहुस्वरीय आवाज़ के स्पैक्ट्रोग्राम थे-

1. खतरा हो सकता है
2. खतरा है, सावधान
3. तैयार रहो
4. तुरन्त उड़ जाओ

पहली दो आवाज़ें तब की गईं जब कोई चुनौती दी जा रही हो। जबकि दूसरी दो आवाज़ें बचाव के लिए की जाती पाई गईं। स्पैक्टोग्राम से कई तरह के आकड़े निकाले गए। जैसे किस तरह की आवाज़ करते हुए कहाँ-कहाँ कितनी ऊर्जा लगी, आवाज़ों की लम्बाई कितनी थी, आवाज़ें कितनी स्वरीय थीं वगैरह वगैरह।

पाया गया कि दोस्ताना आवाज़ों की संरचना लगभग एक-सी थी। और गैरदोस्ताना आवाज़ों की संरचना मिलती-जुलती थी। यानी मिलते-जुलते अर्थ वाली आवाज़ों की संरचना में समानता देखी गई।

मंजरी की टीम ने अपने नतीजे एक लेख में लिखे - बेकार की बड़बड़ से कहीं ज़्यादा कहती है बैबलर। टीम का कहना सही भी है।

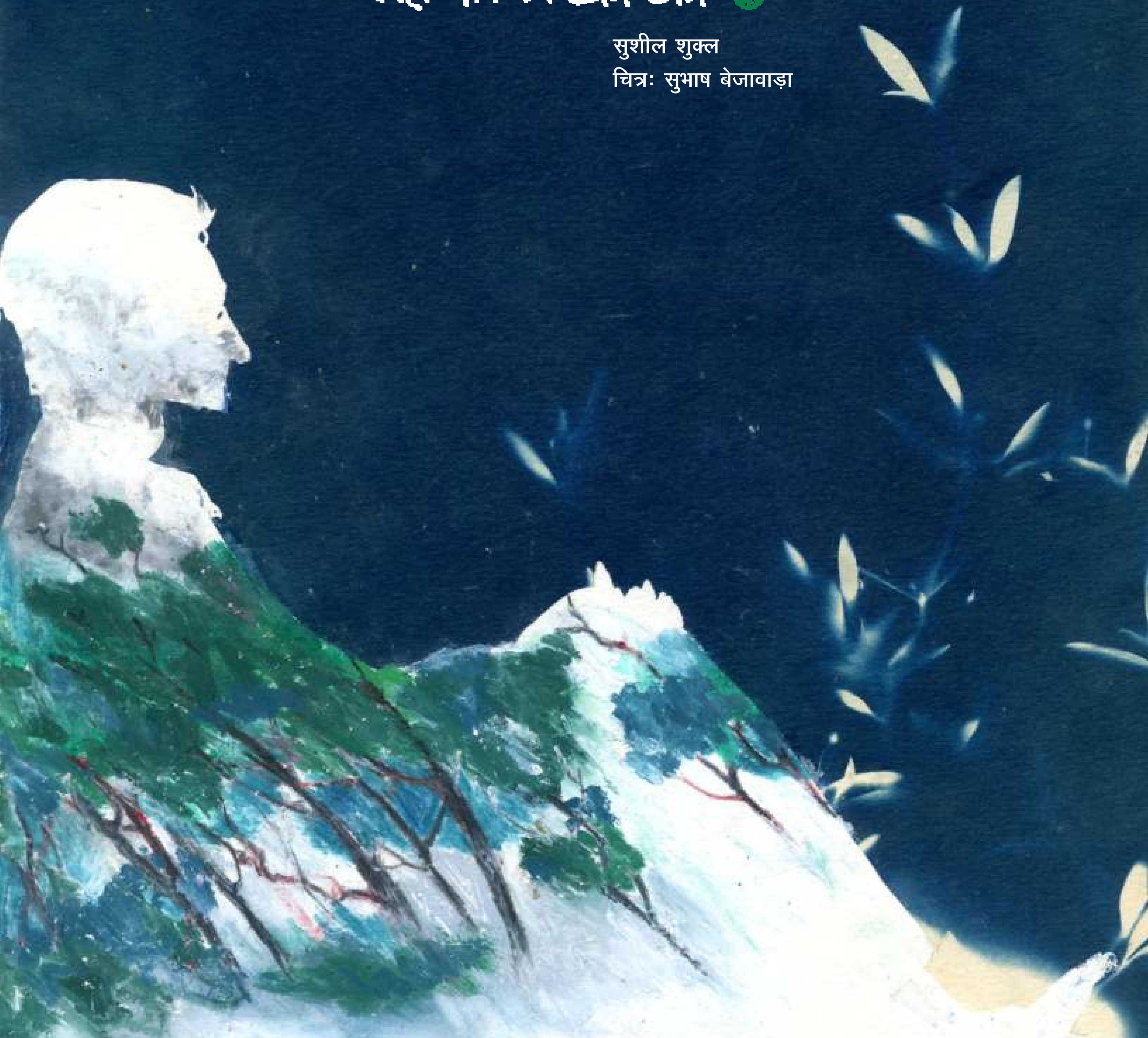
अपने आसपास इस आसानी से मिलने वाली चिड़िया पर शोध कर रही इस टीम ने बैबलर के चिचियाने में किसी इंसानी भाषा की-सी बारीकियाँ खोज निकाली हैं। मैं चाहूँगा कि कोई और आए जो इन नतीजों की नींव पर अपने अलग अध्ययन की इमारत खड़ी करे। और यह बिलकुल ज़रूरी नहीं कि जीवों के व्यवहार को जानने के लिए कोई दुर्लभ, पहुँच के बाहर के या इकोलॉजिली नाज़ुक जीव का ही चुनाव किया जाए। बल्कि बात तो तब है जब आम से, आसानी से दिखाई दे जाने वाले जीवों पर कोई खास शोध हो।

(यह लेख का सम्पादित रूप है। पूरा लेख द वायर में पढ़ा जा सकता है - डीकोडिंग द बैबल्स ऑफ बैबलर्स, क्रिकेट्स एण्ड अण्डरग्रेड्स)



आसमान झोले में रखबे
नक्शे बुध बिरस्पत तक्के
नदी में उतरे नदी के नाँचे
रस्ते पाँव में टँगे-टँगे

सुशील शुक्ल
चित्रः सुभाष बेजावाड़ा



आर. एन. आई. नम्बर - DELHIN/2018/76181 द्विमासिक



मेरी दीवार पर एक सूरज टँगा है
कहीं से भटक कर आया एक बादल
उसके बगल में बैठा है
नीचे काँच-से उजले पानी का
एक तालाब लेटा है

राजेश जोशी

चित्रः सुजाशा दासगुप्ता

Price : ₹125.00

ST0000337

मुद्रक तथा प्रकाशक संजीव कुमार द्वारा
इकतारा ट्रस्ट के लिए मल्टी कलर सर्विसेज़
शेड नं. 92, डी.एस.आई.डी.सी., ओखला इंडस्ट्रियल एरिया, फेज़ 1,
नई दिल्ली 110020 से मुद्रित एवं सी-404, बेसमेंट, डिफेंस कॉलोनी,
नई दिल्ली 110024 से प्रकाशित
सम्पादक - सुशील शुक्ल